RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2025-27
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

जुलाई-2025 | वर्ष - 17 | अंक : 06 | मूल्य : 5/-

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (सहा.अभि. जलकल विभाग), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश :
सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.), मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल)
मो.: 8299162841
हमीरपुर ब्यूरो प्रमुख -
रघुवर प्रसाद, मो.: 9793739030
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख लखनऊ मण्डल :
राजकुमार, उन्नाव
मो.: 9889273743, 9392660070
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य : ब्यूरो प्रमुख
रमा गजभिये, मो.: 7828273934
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001,
मो. : 09887512360, 0144-3201516
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक
पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020
IFSC CODE-SBIN0001784

छत्रपति साहू महाराज

हमारे देश में अनेक व्यक्तित्व ऐसे हुए है जो सुविधाओं में पले, पर जैसे – जैसे बचपन से उन्होंने जवानी की ओर कदम रखा, वैसे – वैसे उन्होंने अभाव में रह रहे लोगों की पीड़ा तथा दर्द को समझा, महसूस किया और उनके लिए कार्य कर समाज के सामने एक आदर्श प्रस्तुत कर दिखाया। ऐसे ही महापुरूषों में से थे छत्रपति साहू महाराज जी, जिन्होंने राजा होते हुए भी हर समय दलित तथा शोषित वर्ग से अपना रिश्ता बनाए रखा।

साहू महाराज का जन्म 26 जुलाई 1874 में हुआ था। उनके पिता का नाम श्रमंत जयसिंह राव आबा साहब घाटगे और माता का नाम राधाबाई था। उनके बचपन का नाम यशवन्तराव था।

साहू महाराज की शिक्षा राजकोट के 'राजकुमार महाविद्यालय' में हुई। राजकोट की शिक्षा समाप्त कर आगे की शिक्षा समाप्त कर आगे की शिक्षा प्राप्त करने के लिए 1890 से 1894 तक वे धारावाड़ में रहें। उन्हें अंग्रेजी और इतिहास आदि अन्य विषयों से राजकाज चलाने की भी शिक्षा दी गई। वे पढ़ाई – लिखाई में कुशल थे। साथ ही शासन सम्बन्धी मामलों को जल्दी ही समझ लिया था।

छत्रपति साहू महाराज 1894 में कोल्हापुर रियासत के राजा हुए। उन दिनों समाज में जातिवाद का बोलबाला था। समाज में जाति, धर्म तथा वर्गों के आधार पर विषमता बढ़ रही थी। समाज का एक वर्ग पिस रहा था और दूसरा उस पर हावी था। साहू महाराज ने इस सबका विश्लेषण करने के बाद दलितोद्धार का कदम उठाया। उन्होंने शूद्रातिशूद्र वर्ग को ऊपर उठाने के लिए एक योजना बनाई और उसे कार्यरूप में लाए। इसके लिए उन्होंने दलित तथा पिछड़ी जातियों के लोगों के लिए स्कूल – कॉलेजों की स्थापना के साथ – साथ उनके लिए छात्रालयों की स्थापना की। समाज में जो वर्ग हजारों वर्षों से सताया जा रहा था, जब उसमें पवित्तन होने लगा तो उच्च वर्ग हजारों वर्षों से सताया जा रहा था, जब उसमें परिवर्तन होने लगा तो उच्च वर्ग को बुरा लगा। वे महाराज को अपना शत्रु समझने लगे। परिणाम यह हुआ कि साहू महाराज की तथाकथित सवर्ण जाति के लोग एक स्वर में निन्दा करने लगे। स्वयं राजपुरोहित ने कहा– 'आप शूद्र है और शूद्र को वेद मन्त्र सुनने का अधिकार नहीं है।' उस समय कोल्हापुर के राजपुरोहित का समर्थन शंकराचार्य ने भी किया था। साहू महाराज ने बहुजन समाज को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से इन सबका डटकर मुकाबला किया।

उन्होंने इस बात को भली भांति समझ लिया था कि दलित तथा पिछड़ी जातियों की अवनति के पीछे समाज में जातिभेद ओर विषमता एक बड़ा कारण रहा है– एक वर्ग का मान – सममान हो तथा दूसरे का अपमान। उन्होंने अमानवीय आधार पर चल रही परम्परा पर वार किया और जन – जन में प्रचार के लिए आन्दोलन चलाया।

1911 में साहू महाराज ने अपने संरक्षण में 'सत्य शोधक समाज' की स्थापना की। उन्होंने कोल्हापुर में 'सत्य शोधक पाठशाला' चलाई। गांव – गांव में सत्य शोधक समाज के सम्मेलन आयोजित किए। यही नहीं दलित समाज के विद्यार्थियों को धर्मज्ञान प्राप्त करने की स्वस्थ परम्परा का विकास किया। ध्यान रहे कि 1873 में महाराष्ट्र के महान समाज सुधारक ज्योतिबा फुले ने 'सत्य शोधक समाज' की स्थापना की थी। जात – पांत, ऊंच – नीच की मानवद्रोही और समाजद्रोही विचार प्रणाली के विरूद्ध मानव और मानव के बीच समता का समर्थन करने वाला यह आन्दोलन था। साहू महाराज ने इसी आन्दोलन को अपनी रियासत में आगे बढ़ाया था।

1919 में डॉ0 अम्बेडकर साहू महाराज के सम्पर्क में आए। उनकी सहायता से ही 31 जनवरी 1920 में बाबा साहेब ने मूकनायक (गूंगों का नेता) मराठी पाक्षिक समाचार – पत्र आरम्भ किया।

21 मार्च 1920 को कोल्हापुर रियासत के माणगांव में डॉ0 अम्बेडकर की अध्यक्षता में दलितों का एक सम्मेलन हुआ। उस सम्मेलन में साहू महाराज ने भाषण देते हुए कहा था– 'भाइयों, आज आपको डॉ0 अम्बेडकर के रूप में अपना रक्षक नेता मिला। मुझे पूर्ण विश्वास है कि डॉ0 अम्बेडकर आपकी गुलामी की बेड़ियां तोड़ देंगे। समय आएगा और डॉ0 अम्बेडकर अखिल भारत के प्रथम श्रेणी के नेता के रूप में चमक उठेंगे।' उस समय कौन जानता था कि साहू महाराज की भविष्यवाणी एक दिन सही साबित होगी।

15 अप्रैल 1920 को साहू महाराज के सहयोग से ही नासिक में 'विद्या वसतीगृह' की स्थापना हुई। इसकी स्थापना करते हुए उन्होंने कहा था– 'बहुत से लोगों का कहना है कि जाति भेद बुरा नहीं, पर जातिद्वेष नहीं होना चाहिए।' ऐसा विचार रखने वाले लोगों को समझाते हुए उन्होंने कहा कि जातिभेद का कार्य ही जातिद्वेष पैदा करता है। इसलिए जातिभेद सबसे पहले समाप्त करना चाहिए।

साहू महाराज सम्पूर्ण भारतीय समाज में परिवर्तन देखना चाहते थे। एक ओर उन्होंने जहां आदिवासियों को गांवों मे बसाने का कार्य किया वहीं दूसरी तरफ प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त करने का कानून भी 1912 में बनाया था। उन्होंने पुनर्विवाह के लिए भी कानून बनाया। इस तरह से उन्होंने अन्य क्षेत्रों में भी क्रांतिकारी कानून बनाकर समाज में परिवर्तन होने की परिस्थितियों की संरचना में सहयोग दिया। उनका किसी जाति विशेष के लोगों से कोई द्वेष न था लेकिन समाज में स्वस्थ्य मूल्यों का निर्माण करना चाहते थे। इसलिए ही शायद तत्कालीन समय में उच्च वर्ग के कुछ लोग उनके विरोधी हो गए थे और उन्हें अपना शत्रु मानने लगे थे। पर साहू महाराज किसी के शत्रु न थे। न ही किसी को शत्रु बनाने में रूचि थी। वे तो मानव – मानव के बीच प्यार और भाईचारे के अंकुर पैदा करना चाहते थे। जिसमें किसी सीमा तक वे सफल भी हुए।

निश्चित ही साहू महाराज ने भारतीय समाज से विषमता समाप्त करने तथा समता और बराबरी के मानवीय सिद्धान्त को लागू कराने के लिए जीवनभर जो संघर्ष किए, वे हमेशा – हमेशा के लिए याद किए जायेंगे तथा समाज की भावी पीढ़ी उनसे हर एक युग में प्रेरणा भी लेती रहेगी। उन्होंने जातिभेद समाप्त करने के लिए एक ऐतिहासिक कार्य किया था। यही नहीं, समय – समय पर वे बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर को हर तरह से सहयोग भी किया करते थे। उनके मन में बहुजन समाज के लिए गहरा लगाव था। वैसे वे हर समाज की प्रगति देखना चाहते थे। पर जो भी कारणवश पिछड़ गए थे उन्हें आगे लाना भी वे अपना फर्ज समझते थे।

10 मई 1922 को उनका निधन हो गया। स्वयं बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर को उनके निधन पर बहुत दुःख हुआ था। क्योंकि वे जानते थे कि इस तरह के महापुरूष बिरले ही जन्म लेते हैं। ऐसे बहुत कम लोग हैं जो समाज के लिए जीते हैं। साहू महाराज उनमें से ही एक थे, जो जीवनपर्यंत समाज में समता और बराबरी देखने के लिए संघर्ष करते रहे।

साभार :
समता की ओर (सूचना विभाग)

पृष्ठ 13–16

मानवाधिकार और प्रेस

''प्रेस की स्वतंत्रता सभी स्वतंत्रताओं की जननी है। यह व्यक्ति के मानसिक एवं बौद्धिक तथा समाज के सर्वांगीण विकास के लिये आवश्यक है। सत्य का अन्वेषण प्रेस के बिना संभव नहीं हैं। संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (क) के अधीन प्रदत्त वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में प्रेस की स्वतंत्रता भी निहित है। कुल मिलाकर प्रेस की स्वतंत्रता लोकतांत्रिक सरकार का आधार स्तम्भ है। लेकिन यह स्वतंत्रता अबाध एवं प्रतिबंधित नहीं है। इसकी अपनी कुछ मर्यादाएँ हैं।'' यह विचार है उच्चतम न्यायालय के न्यायधीश न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह एवं न्यायमूर्ति फैजानुद्दीन के जो उन्होंने ''इन रि हरिजयसिंह तथा इन रि विजय कुमार'' के मामले में अभिव्यक्त किये हैं।

अब यह सुस्थापित है कि प्रेस लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ है। लोकतंत्र की सफलता स्वतंत्र एवं सुदृढ़ प्रेस पर निर्भर करती है। कई विनिर्णयों में इस धारणा की पुष्टि की जा चुकी है। लेकिन दूसरी तरफ यह भी सत्य है कि प्रेस की स्वतंत्रता निरपेक्ष नहीं है। उसके भी अपने कर्तव्य है, दायित्व हैं। यदि प्रेस इन कर्तव्यों से विमुख होता है तो वह अभियोजन का पात्र हो सकता है। इस मामले में ऐसा ही कुछ हुआ है।

दी सनडे ट्रिब्यून तथा पंजाब केसरी देश के दो प्रमुख समाचार पत्र हैं। इन दोनों समाचार पत्रों के 10 मार्च, 1996 के अंकों में पेट्रोल पम्पों के आवंटन के बारे में समाचार प्रकाशित हुए। दी सनडे ट्रिब्यून में ''सबके लिये पम्प'' (पम्प्स फॉर ऑल) तथा पंजाब केसरी में ''प्रधानमंत्री परिवार के निर्धन सदस्य'' शीर्षक से ये समाचार थे। समाचारों में केन्द्रीय पेट्रोलियम मंत्री सतीश शर्मा पर यह आरोप लगया गया था कि उनके द्वारा अपने विवेकाधीन कोटे से प्रधानमंत्री तथा अन्य कई मंत्रियों, संसद सदस्यों तथा उच्चाधिकारियों के परिजनों के नाम पेट्रोल पम्प एवं एल.पी. जी गैस की एजेन्सियाँ आवंटित की गई हैं। इनकी एक सूची भी जारी की गई। आश्चर्य तब हुआ जब इस सूची में उच्चतम न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश ए.एम. अहमदी के दो पुत्रों का भी नाम था। इन समाचारों के आधार पर उच्चतम न्यायालय द्वारा पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय भारत सरकार के सचिव विजय एल. केलकर को नोटिस जारी किया गया तथा उनसे इन समाचारों पर तथ्यात्मक टिप्पणी मांगी गई। मंत्रालय द्वारा प्रेषित टिप्पणी में इन समाचारों को मिथ्या एवं भ्रामक बताया गया। इस पर उच्चतम न्यायालय द्वारा इन दोनों समाचार पत्रों के विरुद्ध दिनांक 27 मार्च, 1996 को अवमानना की कार्यवाही प्रारंभ की गई। अन्ततः दोनों समाचार पत्रों की ओर से बिना शर्त क्षमा याचना की गई। उनका यह कहना था कि उनके संवाददाताओं द्वारा गलत समाचार दिये गये तथा उनकी सत्यता की पुष्टि किये बिना ही उन्हें समाचार पत्रों में प्रकाशित कर दिया गया। इसमें उनकी कोई दुर्भावना नहीं रही है। उच्चतम न्यायालय ने दोनों समाचार पत्रों के सम्पादकों को इस शर्त के साथ माफी दी कि वे अपने समाचार पत्रों के मुखपृष्ठ पर तथाकथित समाचारों को मिथ्या एवं भ्रामक बताते हुए माफी मांगने के समाचार प्रकाशित करें।

इस प्रकार इस मामले का पटाक्षेप तो यहां हो गया पर समाचार प्रकाशन के सम्बन्ध में यह सम्पादक के कई दायित्व छोड़ गया। उच्चतम न्यायालय ने कहा– ''यह सही है कि दैनिक जीवन से जुड़ी राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक घटनाओं को प्रकट करना प्रेस का अधिकार है। लेकिन प्रेस का यह दायित्व भी है कि प्रकाशित समाचार सत्य घटनाओं पर आधारित हों। समाचारों को प्रकाशित करने से पूर्व उनकी सत्यता एवं विश्वसनीयता की पुष्टि कर ली जाये। यह सुनिश्चित कर लिया जाये कि समाचार प्रकाशन योग्य है या नहीं। ऐसा इसलिए आवश्यक है क्योंकि समाचारों से ही जनमत बनता है।

न्यायालय ने आगे कहा–प्रेस की स्वतंत्रता सदैव अबाध, अपरिसीमित एवं अप्रतिबंधित नहीं है। अबाध स्वतंत्रता दी भी नहीं जा सकती है। प्रेस को अबाध स्वतंत्रता देने का अर्थ होगा उसे अनियंत्रित लाइसेंस दे देना। ऐसा करने से समाज में अव्यवस्था एवं अराजकता उत्पन्न हो जायेगी। प्रेस को स्वच्छन्दता प्रदान नहीं की जा सकती। प्रेस की स्वतंत्रता उसके विभिन्न दायित्वों से बंधी हुई है। समाज के प्रति उसके कुछ कर्तव्य हैं। लोक व्यवस्था, गरिमा, शालीनता एवं नैतिकता की रक्षा करना और उसे अक्षुण्ण बनाये रखना प्रेस का अहम् दायित्व है। यदि प्रेस द्वारा गलत, मिथ्या, भ्रामक, अनुचित और अवैधानिक समाचार प्रकाशित किये जाते हैं तो उसे विधि के न्यायालय में दण्डित किया जा सकता है। अतः समाचार पत्र के सम्पादक का यह गहन दायित्व है कि वह समाचार पत्रों में मिथ्या एवं भ्रामक समाचार प्रकाशित न करें। मात्र संवाददाताओं पर निर्भर रहना उचित नहीं है। सम्पादक अपनी गलतियों के लिये सद्भावना का सहारा लेकर बच नहीं सकता। न्यायालय ने यह भी कहा कि सम्पादक के समक्ष कई प्रकार के समाचार रखे जाते हैं। उनमें से प्रकाशन योग्य समाचारों का चयन सम्पादक को ही करना होता है। अतः गलत, मिथ्या एवं भ्रामक समाचारों के प्रकाशन के लिये वहीं उत्तरदायी है।

प्रेस की स्वतंत्रता के संबंध में उच्चतम न्यायालय ने अपने कई पूर्व–निर्णयों का भी हवाला दिया। ''इण्डियन एक्सप्रेस न्यूजपेपर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया'' तथा ''एक्सप्रेस न्यूज पेपर्स प्रा. लिं बनाम यूनियन आफ इण्डिया'' के मामलों में प्रेस को लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ बताते हुए इसे सभी स्वतंत्रताओं की जननी माना गया है। यही व्यक्ति के मानसिक एवं बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। संविधान के अनुच्छे 19 (1) (क) में प्रदत्त वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में प्रेस की स्वतंत्रता भी निहित है।

न्यायालय ने संयुक्त राष्ट्र संघ की आर्थिक एवं सामाजिक परिषद को दी गई मोन्स लोपेज की रिपोर्ट के इन अंशों को भी उद्धृत किया कि – ''यह सत्य है कि स्वतंत्रता के बिना मानव विकास असंभव है, लेकिन साथ ही यह भी उतना ही सत्य है कि मानव विकास के लिये अनुशासन भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितनी स्वतंत्रता।'' अतः प्रेस का यह कर्तव्य है कि वह समाचार पत्रों में समाचारों के प्रकाशन में निष्पक्षता का परिचय दें तथा उनमें सही एवं यथार्थ समाचारों को ही स्थान दें।

उच्चतम न्यायालय का यह निर्णय एक ऐसा निर्णय है जो प्रेस की स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए उसकी लक्ष्मण रेखा भी तय करता है। प्रेस की स्वतंत्रता के साथ–साथ उसकी अपनी मर्यादाएं भी हैं। समाज में व्यवस्था, गरिमा, शालीनता एवं नैतिकता बनाये रखने में प्रेस की भूमिका ही अहम् होती है। जनमत प्रेस के आधार पर ही बनता है। अतः प्रेस स्वतंत्र भी रहे और अनुशासित भी, यही समय का तकाजा है।

''संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) में प्रत्येक व्यक्ति को वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। यद्यपि इसमें प्रेस की स्वतंत्रता का उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर ही लोकतंत्र की सफलता निर्भर करती है। प्रेस के माध्यम से व्यक्ति के विचारों को जनसाधारण तक पहुंचाया जाता है।'' यह विचार है आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति हनुमंतप्पा एवं न्यायमूर्ति अविनाश सोमकान्त के जो उन्होंने ''एम. हसन बनाम आन्ध्र प्रदेश सरकार'' के मामले में अभिव्यक्त किये हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रेस की आजादी के बारे में कई बार प्रश्न उठे हैं। यदा कदा यह प्रश्न भी उठा है कि क्या प्रेस कारावास की सजा काट रहे व्यक्तियों का साक्षात्कार लेने के लिए भी स्वतंत्र है? कई न्यायिक निर्णयों में इस प्रश्न का उत्तर दिया जा चुका है। फिर भी ऐसा ही प्रश्न इस मामले में और उठ खड़ा हुआ है। एम. हसन एक पत्रकार एवं वृतचित्र निर्माता है। वे अब तक समाज की विभिन्न समस्याओं से जुड़े लगभग 200 वृतचित्र तैयार कर चुके हैं। इस मामले में पिटीश्नर एम. हसन ने आन्ध्रप्रदेश की एक जेल में मौत की सजा की प्रतीक्षा कर रहे अभियुक्त एस. चेलापति राव एवं जी. विजय वर्धन राव का साक्षात्कार लेने का प्रयास किया लेकिन जेल अधिकारियों ने यह कहते हुए अनुमति प्रदान नहीं की कि इससे (i) शान्ति एवं सुरक्षा भंग होने की आशंका है, (ii) न्यायालय की गरिमा पर आंच आ सकती है, (iii) लोक अभियुक्तों की सजा कम करने का अभियान छेड़ सकते हैं, तथा (iv) स्वयं अभियुक्त एक बार साक्षात्कार देने से मना कर चुके हैं। जेल अधिकारियों के इस आदेश को पिटीश्नर द्वारा आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई। न्यायालय ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुए पिटीश्नर को साक्षात्कार की अनुमति प्रदान की बशर्ते कि अभियुक्त स्वेच्छा से साक्षात्कार देने को तैयार हो।

न्यायालय ने कहा – संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इसमें प्रेस की स्वतंत्रता भी निहित है। लोकतंत्र की सफलता मुक्त, उचित, ईमानदार एवं स्वतंत्र प्रेस पर निर्भर करती है। वह प्रेस ही है जो व्यक्ति के विचारों को जन साधारण तक पहुंचाता है। फिर प्रेस की स्वतंत्रता भी अबाध नहीं है। उस पर भी अनेक निर्बन्धन है। यदि वह उनका उल्लंघन करता है तो उसे विभिन्न कानूनों के अंतर्गत दण्डित किया जा सकता है।

न्यायालय ने अपने फैसले में कई पूर्व–निर्णयों का हवाला दिया। ''गोपालन बनाम स्टेट ऑफ मद्रास'' के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह कहा है कि – ''संविधान के अनुच्छेद 19 के अधीन प्रदत्त अधिकार एक स्वतंत्र व्यक्ति के अधिकार हैं। यह अधिकार उसके नैसर्गिक अधिकार है, कानून द्वारा सृजित नहीं। प्रत्येक व्यक्ति को इन अधिकारों का उपयोग–उपभोग करने की स्वतंत्रता है।'' आगे चलकर ''स्टेट ऑफ वेस्ट बंगाल बनाम सुबोध गोपाल'' के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा फिर यह कहा गया कि – संविधान के अनुच्छे 19 (1) के अधीन प्रदत्त आधिकार व्यक्ति के मूलभूत एवं महत्वपूर्ण अधिकार हैं और ये नैसर्गिक अधिकारों के रूप में प्रत्याभूत हैं। ये स्वतंत्र देश के प्रत्येक नागरिक के व्यक्तित्व में समाहित है।'' यह बात अलग है कि देश की एकता, अखंडता, सम्प्रभुता, कानून एवं व्यवस्था, सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं सदाचार आदि के आधार पर इन अधिकारों पर युक्तियुक्त प्रतिबंध लगाये जा सकते हैं।

जहां तक कैदियों एवं बंदियों का प्रश्न है, ''वादीश्वरन बनाम स्टेट ऑफ तमिलनाडू'' मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट किया है कि देश के प्रत्येक व्यक्ति को इन अधिकारों का उपयोग–उपभोग करने का अधिकार है चाहे व बंदी या कैदी ही क्यों न हो। अनुच्छेद 19 के अधीन प्रदत्त अधिकारों के उपयोग–उपभोग के संबंध में साधारण व्यक्तियों व कैदियों के बीच कोई विभेद नहीं किया गया है। मूलभूत अधिकारों को जेल की दीवारों से बाहर नहीं किया जा सकता।'' ''चार्ल्स शोभराज बनाम अधीक्षक, सेन्ट्रल जेल, तिहाड़ तथा ''सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन'' के मामलों में उच्चतम न्यायालय ने एक बड़ी अच्छी बात कही है कि – ''हमारी जेलें कानून के पत्थरों से बनी हैं। इनमें बंदी व्यक्ति भी इंसान हैं पशु नहीं। उन्हें भी सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अधिकार है। मात्र कैदी या बंदी होने के कारण उन्हें संविधान के अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता है।''

इस संबंध में ''प्रभुदत्त बनाम यूनियन ऑफ इंडिया'' का एक महत्वपूर्ण मामला है जिसमें पत्रकार प्रभुदत्त ने जेल में सजा काट रहे अभियुक्तों से साक्षात्कार करना चाहा था। उच्चतम न्यायालय ने साक्षात्कार की अनुमति देते हुए कहा कि – ''आज के आधुनिक लोकतांत्रिक समाज में प्रेस की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह समाज का एक गतिशील एवं शक्तिशाली स्तम्भ है।'' न्यायमूर्ति मार्शल प्रेस की स्वतंत्रता को एक प्रत्याभूत अधिकार मानते हैं, अनुज्ञप्ति नहीं। लार्ड जस्टिस डेनिंग कहते हैं कि – ''सार्वजनिक महत्व के विषयों पर प्रेस के माध्यम से मुक्त चर्चा करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, हतोत्साहित नहीं।''

प्रेस की स्वतंत्रता से जुड़े ''रोमेश थापर बनाम स्टेट ऑफ मद्रास'' तथा ''सकल पेपर्स बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया'' के दो और महत्वपूर्ण मामले हैं जिनमें उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिधारित किया गया है कि –''वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में विचारों का प्रचार, प्रसार एवं संचार सम्मिलित है। इसका सशक्त माध्यम है समाचार पत्र। समाचार पत्रों की संख्या एवं पृष्ठों को परिसीमित किया जाना उचित नहीं है। लेकिन अनुच्छेद 19 (2) के अधीन इन पर युक्तियुक्त प्रतिबंध लगाये जा सकते हैं।'' ठीक यही स्थिति वृतचित्रों की है। ''वीरेन्द्र बनाम स्टेट ऑफ पंजाब'' के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह साफ तौर पर कहा है कि– ''किसी समाचार पत्र को समाज की ज्वलन्त समस्याओं पर अपने विचार व्यक्त करने से रोकना वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अतिक्रमण है। विचारों की अभिव्यक्ति एवं उनका आदान–प्रदान समाज के हित में हैं।''

''मेनका गांधी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया'' का एक और ऐसा मामला है जिसमें उच्चतम न्यायालय ने लोकतंत्र की सफलता के लिये प्रेस की सफलता को अपरिहार्य बताया है। उच्चतम न्यायालय का कहना है कि– ''लोकतंत्र मुक्त एवं खुली चर्चाओं पर निर्भर है। सरकार की कमियों एवं कमजोरियों को उजागर करना अपेक्षित है। यदि हम यह कहते हैं कि लोकतंत्र का अर्थ जनता की सरकार और जनता के लिये सरकार है तो उसमें जनता को मुक्त एवं खुली चर्चा का अवसर अवश्य मिलना चाहिए।''

अन्त में ''अब्रामसन बनाम यूनाइटेड स्टेट्स'' के मामले में अभिव्यक्त किये गये जस्टिस होम्स के विचारों को उद्धृत करना समीचीन होगा। उन्होंने कहा है कि– ''सत्य की सर्वोत्तम कसौटी विचारों की ऐसी अभिव्यक्ति है जिसे प्रतिस्पर्धा में जनसाधारण द्वारा स्वीकार किया जाये। इसके लिये विचार अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता एवं नवीनतम विचारों को ग्राह्य करने की तत्परता अपेक्षित है। सबको विचार अभिव्यक्त करने, उनका आलोचनात्मक विश्लेषण करने, सत्य पर आधारित विचारों को स्वीकार करने तथा शेष को नकारने का अधिकार होना चाहिए।

साभार :
पत्रकारिता एवं प्रेस विधि (सिद्धांत और व्यवहार)
पेज संख्या 72 से 76 तक
डॉ. बसंतीलाल बाबेल

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

अपने अंतिम बसेरा को ही आर्यों ने तीर्थ–स्थल घोषित किया

यह देखने को मिलता है कि अधिकांश प्राचीन हिन्दू तीर्थ स्थल गंगा यमुना नदी के आस–पास के क्षेत्रों में ही स्थित है। वाराणसी, इलाहाबाद, हरिद्वार, अयोध्या, काशी, प्रयाग, मथुरा आदि हिन्दुओं के प्राचीन तीर्थस्थल हैं। इनके महात्म्य का वर्णन पौराणिक कथाओं में भी बढ़–चढ़कर आया है। इतना ही नहीं, इन तीर्थस्थानों में जो पंडे होते हैं उनके पास, खास कर उत्तर भारत के हिन्दू यजमानों की कई पीढ़ी की वंशावली भी रहती है। प्रत्येक पंडा किसी निश्चित क्षेत्र के लिए अधिकृत होता है और उस क्षेत्र का यजमान उसी पंडे के पास पहुँचता है। यद्यपि आजकल पंडे दलालों का प्रयोग कर दूसरे के यजमानों को भी अपने बिछाये जाल में फँसा लेते हैं।

इस सब बिन्दुओं पर विवेचना करने से स्पष्ट पता चलता है कि ऐसा होने का संबंध आर्य ब्राह्मणों के भारत आक्रमण के बाद उनके विस्तार और विकास से है। ईसा पूर्व 2500 में आर्य ब्राह्मण ईरान से भारत की तरफ प्रस्थान कर चुके थे। अफगानिस्तान होते हुए भारत की सीमा में ये ईसा पूर्व 1500 में प्रवेश किया, अर्थात ईरान से भारत तक पहुँचने में उन्हें 1000 वर्ष लग गये। भारत पहुँचने के 300 वर्ष बाद ईसापूर्व 1200 में वसिष्ठ, भारद्वाज और विश्वामित्र जैसे वैदिक ऋषियों ने ऋग्वेद के मंत्रों का सृजन करना प्रारम्भ कर दिया। आर्य ब्राह्मण गंगा–यमुना के मैदानी भाग तक पहुँचते–पहुँचते ऋग्वेद लगभग पूरा कर चुके थे।

यहाँ उल्लेखनीय है कि आर्य–ब्राह्मणों ने रूस के वोल्गा से गंगा तक का सफर चार चरणों में पूरा किया। अर्थात् इन्होंने चार ठहरावों का प्रयोग किया, जिसमें से एक ठहराव भारत के बाहर था और तीन ठहराव भारत के अन्दर। भारत के बाहर जिन ठहरावों का इस्तेमाल आर्य लोगों ने किया, वह था ईरान। ये यहाँ काफी काल तक रहे होंगे, क्योंकि वर्तमान भारत में अधिकांश सभ्यता संस्कृति ईरान से ही आयातित है। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार ईरानी ग्रंथ जेन्द अवेस्ता और भारतीय ऋग्वेद में काफी समानता है। इसका मतलब है की ऋग्वेद में ईरानी सभ्यता संस्कृति की ही झलक है बाद में ईरानियों ने जेन्द अवेस्ता की रचना कर वहाँ के समाज, संस्कृति और सत्ता का वर्णन किया। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. धर्मानन्द कोसाम्बी वैदिक संस्कृति को बेबीलोनियन संस्कृति की उपज मानते हैं, क्योंकि बेबीलोनियन संस्कृति सुमेरियन संस्कृति से बनी है और सुमेरियन लोगों का मूल वासस्थान मध्य एशिया है। चूँकि आर्यों का भी मूल वासस्थान मध्य एशिया ही है, अतः दोनों में काफी समानता है।

आर्य ब्राह्मण भारत के अन्दर जिन पड़ावों या ठहरावों का इस्तेमाल किये उसमें पहला पड़ाव था अफगानिस्तान, दूसरा पंजाब और तीसरा पड़ाव गंगा–यमुना का उर्वर मैदानी भाग। प्रथम आर्य–अनार्य संघर्ष आर्य ब्राह्मणों के प्रथम पड़ाव अफगानिस्तान में ही ईसा पूर्व 2500 में हुआ था। वहीं पर इन्द्र (आर्यों के अधिपति) के चुनाव की परिपाटी की शुरुआत हुई। पुरहुत प्रथम इन्द्र था। आर्य ब्राह्मणों का दूसरा बसेरा पंजाब था, जहाँ पर अतिविकसित प्राक्वैदिक हड़प्पा नगर का खुदाई में पता चला है। यहाँ पर कोई प्रभावशाली आर्य समुदाय रहा होगा जिस कारण हड़प्पा का नाम ऋग्वेद में 'हरियुपिया' के रूप में उल्लेख हुआ है। इनका भारत में तीसरा और अंतिम पड़ाव गंगा यमुना का मैदानी भाग था। इन नदियों के आस–पास के क्षेत्रों में इनका स्थायी वास हुआ, जिस कारण ये अपने पूर्व निवास स्थान (रूस के वोल्गा क्षेत्र और ईरान) की सभ्यता, संस्कृति और धर्म को इन्हीं क्षेत्रों में सबसे अधिक स्थापित और प्रचारित करने में कामयाब हुए। इन स्थानों को धार्मिक महत्व से जोड़कर इसे पवित्र बना दिया गया तथा इन्हें तीर्थ के रूप में घोषित कर दिया गया। आम जनता में यह धार्मिक भावना पैदा की गई कि जीवन के रहते प्रत्येक प्राणी को कम से कम एक बार इन तीर्थों को देखना और भ्रमण करना जरूरी है, अन्यथा जीवन निरर्थक है। विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद का अंतिम मंडल आर्य ब्राह्मण अपने तीसरे पड़ाव आने तक लिख चुके थे। यही कारण है कि आर्य ब्राह्मण अपने तीसरे पड़ाव को सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व का क्षेत्र घोषित करने में सफल रहे।

जैसे–जैसे काल बीतता गया, आर्य ब्राह्मण ने यज्ञवाद के साथ नाना प्रकार के कर्मकाण्ड पद्धति का सृजन करते गये। यद्यपि वेदों में आत्मा, ईश्वर तथा मंदिर का कोई उल्लेख नहीं है, तथापि उत्तरवैदिक काल में इन सब के नाम पर ब्राह्मणों ने व्यापक व्यापार करना शुरू कर दिया था। इन्होंने अपने इस अंतिम पड़ाव को धार्मिक महत्व देकर इसका संबंध पवित्रता से जोड़ दिया तथा मोक्ष के लिए प्रत्येक हिंदू को तीर्थ यात्रा, दान–पुण्य और चढ़ावा अनिवार्य कर दिया। गौरतलब है कि आर्यों ने उसी स्थान को तीर्थस्थल के रूप में महत्व दिया, जो उनका अंतिम पड़ाव था, जहाँ वे स्थायी रूप से बसे। उन्होंने उस स्थान का तीर्थ के रूप में पुराण ग्रंथों में वर्णन कर उसका धार्मिक महत्व प्रदान किये। प्रयाग के संबंध में संत तुलसीदास लिखते हैं–

तीर्थ पति पुनि दीख प्रयागा। निरखत जनम कोटि अध भागा।''

अर्थात् ''प्रयाग को तीर्थों का राजा कहा जाता है, जिसके एक बार दर्शन से हजारों जन्मों के पाप दूर हो जाते हैं।'' आर्यों के इस धार्मिक भावना से प्रतीत होता है कि तीर्थों में प्रयाग विशेष महत्व का स्थान था। ऐसा प्रतीत होता है कि कोई प्रभावशाली आर्य अधिक संख्या में प्रयाग में बसे होंगे, इसीलिए शास्त्रों में इसके धार्मिक महत्व का खूब बखान किया गया है। आम जनता पर इसका भारी असर हुआ, यही कारण है कि दुःख से व्याकुल भारत की आम जनता बगैर परिश्रम दुःख निवारण हेतु इन जगहों पर खिंचा चला आता है और कथित परलोक में स्थान सुनिश्चित कराने हेतु इस जन्म के खून–पसीने की कमाई लुटा देता है।

आर्य ब्राह्मणों के वंशजों ने भी अपने पूर्वजों के धार्मिक धंधेबाजी को आगे बढ़ाते हुए समय–समय पर यहाँ काफी मंदिरों और मठों का निर्माण किया तथा कर्मकाण्ड आदि का बढ़ावा दिया, जो आज तक जारी है। चूँकि ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से पैदा हुए हैं, उनको श्रम नहीं करना है, केवल, शिक्षा और पूजा का काम करना है, इसलिए बाद में पीढ़ियों ने गंगा–यमुना के तटीय इलाके को धार्मिकता और पवित्रता से जोड़ा तथा मुफ्त में पेटभरी का उपाय किया। गंगा का उल्लेख वेद में भी आया है, परन्तु पौराणिक ग्रंथों में तो गंगा का वर्णन बड़े ही चमत्कारी, मनोहारी और सर्वफलदायिनी गंगा मइया के रूप में आया है। आज भी प्रत्येक हिंदू गंगाजल को पवित्र मानता है तथा उसका उपयोग धार्मिक अनुष्ठानों में करता है। गंगाजल के प्रति हिन्दुओं में पवित्रता के भाव उत्पन्न करने में प्रकृति का भी हाथ है। यदि गंगाजल को किसी बर्तन में सालों रखा जाय तो भी उसमें जीवाणु नहीं लगते हैं, यही प्राकृतिक विशेषता है गंगाजल की, और गंगा का यही गुण आम जनता में श्रद्धा उत्पन्न करता है। परन्तु गंगा के पानी में जीवाणु क्यों नहीं लगते इसका एक वैज्ञानिक कारण है, और वह है गंगा के पानी में वैक्टीरियोफेज का होना। वैक्टीरियोफेज एक ऐसा जीवाणु है जो रोग फैलाने वाले जीवाणु को नष्ट कर देता है, जिस कारण पानी जीवाणु मुक्त रहता है। गंगा की पवित्रता का यही रहस्य है। परन्तु जब यही गंगा जल रासायनिक प्रक्रिया (वाटर ट्रीटमेंट) द्वारा शुद्धिकरण के बाद पीने के रूप में शहर में आपूर्ति की जाती है और उस जल को किसी बर्तन में बहुत दिन तक रखा जाता है तो उसमें जीवाणु लग जाते हैं। वाटर ट्रीटमेंट के दौरान प्रयुक्त रासायनिक पदार्थ से वैक्टीरियोफेज मर जाता है जिससे जीवाणु की वृद्धि होने लगती है और पानी सड़ जाता है। पाठकगण गंगाजल की पवित्रता के इस मिथक की वास्तविकता जानकर पंडों के जाल में नहीं फँसेंगे, ऐसी आशा है।

आर्य ब्राह्मण अपने अस्तित्व और प्रभुत्व को टिकाये रखने के लिए समय–समय पर मंदिरों और तीर्थों का नवनिर्माण करते रहते हैं। इसी संदर्भ में आदिशंकराचार्य ने भारत के चारों दिशाओं में ब्राह्मणी संस्कृति के विस्तार के लिए चार धाम–केदारनाथ, कन्याकुमारी, द्वारका और जगन्नाथपुरी स्थापित किया, जिसमें ब्राह्मण जाति के 'शंकराचार्य' नियुक्ति की परम्परा आज तक चल रही है। अक्षर धाम, अयोध्या में प्रस्तावित राम मंदिर उसी कड़ी का एक हिस्सा है।

अतः वे लोग, जो यह समझते हैं कि हरिद्वार, वाराणसी, काशी, अयोध्या, प्रयाग, जगन्नाथपुरी, द्वारका, कुंभ आदि स्थानों में घूमने और नहाने से पाप कट जायेगा, दुख से मुक्ति मिल जायेगी तथा मरने के बाद बैकुण्ठ धाम मिल जायेगा। वाराणसी में श्राद्ध करने और गया में पिंडदान करने से पितरों को स्वर्ग मिल जायेगा, उनकी यह भूल है। यदि ऐसा होता तो गंगा नदी में पाये जाने वाले मछली, मेढ़क, मगर आदि तथा तीर्थस्थानों में भटकने वाले कुत्ता, बिल्ली, खच्चर को पहले स्वर्ग की प्राप्ति होती। सच्चाई यह है कि उनकी मुक्ति और उन्नति उनके स्वयं के परिश्रम और संघर्ष से ही संभव है। 4 मार्च, 1933 को बंबई में आयोजित अछूत बैठक में बाबासाहब द्वारा दिये गये सीख का हमें पूर्ण मनोयोग से अमल करना चाहिए। इस बैठक में उन्होंने कहा था कि–तुम्हें अपनी दासता स्वयं मिटानी होगी, अपनी दासता मिटाने हेतु ईश्वर अथवा अतिप्राकृतिक शक्ति पर निर्भर मत होओ। धार्मिक ग्रंथो, तीर्थस्थानों और उपवासों के प्रति तुम्हारी आस्था तुम्हें दासत्व और द्ररिद्रता से मुक्त नहीं कर देगा। तुम्हारे पूर्वज पीढ़ियों से ऐसा करते आ रहे हैं लेकिन तुम्हारे जीवन की दयनीयता किसी भी प्रकार कम नहीं हुई। तुम्हारा धार्मिक उपवास, तपस्या और प्रायश्चित तुम्हें भूखे मरने से नहीं बचा पाया है। अतः तुम्हें राजनीतिक शक्ति प्राप्त करनी होगी ताकि तुम अपने उद्धार के लिए कानून बना सको, अतः तुम अपना ध्यान पूजा–पाठ से हटाकर विधि निर्माणकर्ता की शक्ति प्राप्त करने में लगाओ। इसी में तुम्हारी मुक्ति निहित है। तुम्हें इसके लिए चौकन्ना, मजबूत, सुशिक्षित और स्वाभिमानी बनना पड़ेगा। वास्तव में तीर्थस्थानों का केवल भौगोलिक और ऐतिहासिक महत्व है। ये स्थान आर्य आक्रमण के निशानी का प्रतीक है। मूल निवासियों के उर्वर मैदानी इलाकों पर आर्यों द्वारा कब्जा जमाने तथा उन्हें गुलाम बनाने का प्रतीक है। ऐसे प्रतीक स्थलों को तीर्थ मानना, उसे ईश्वरीय समझना अपनी आजादी, धन, समय और स्वामित्व का नाश करना है। मूलनिवासी दलितबहुजनों के लिए तीर्थ तो सारनाथ, लुम्बनी, कुशीनगर, बोधगया, राजगृह है जो बहुजन उद्धारक महामानव युद्ध का जन्म और कर्मस्थली है। बुद्ध ने बहुजनों को असमानता पर आधारित ब्राह्मणवादी गर्त से निकालकर समतावादी समाज में जीने का अवसर प्रदान किया है। इनकी प्रेरणा पाकर विश्वविभूति बाबासाहब डॉ. अम्बेडकर ने हमें ब्राह्मणी गुलामी से मुक्ति दिलाकर सम्मान के साथ जीने का मार्ग दिखाया। हमारे देवता भगवान बुद्ध, महावीर, कबीर, रविदास, रामास्वामी नायकर, ज्योतिबाफूले, संत गाडगे, गौरेया बाबा, चौहरमल, क्षत्रपति शाहू जी महाराज, बाबासाहब डॉ. अम्बेडकर हैं। हमें इनका स्मरण करना चाहिए तथा इनसे जुड़े, साहित्य और क्षेत्रों से संबंध रखना चाहिए। दलित–बहुजनों का इसी में कल्याण है।

साभार :
आनुवांशिक शोध (D.N.A) एवं विदेशी आर्य–ब्राह्मण
पेज संख्या 61 से 65 तक
डॉ. विजय कुमार त्रिशरण

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

राष्ट्र और राज्य

बहुराष्ट्रीयताओं के सवाल पर जब हम विचार करते है तो सबसे पहले बात आती है कि यह राष्ट्र क्या है? राष्ट्रीयता और राष्ट्रवाद क्या है? इस पर अनेक विद्वानों ने चर्चा की है। प्लेटो और अरस्तू ने इसे एक संस्था माना है। किंतु आदिम काल में कोई इस प्रकार की संस्था नहीं थी। मनुष्य कबीलों में बंटा हुआ था। लोगों को राष्ट्र और समाज का कोई ज्ञान नहीं था। उस समय आपसी हितों में कोई संघर्ष नहीं था। जब कृषि का विकास हुआ तो संपत्ति का रिवाज शुरू हुआ। जिनके पास काफी भू–संपत्ति थी वे स्वतः ही स्वामी बन गए और जो अर्जन नहीं कर सके वे स्वामी के खेतों और घरों में काम करने लगे, वे दास श्रमिक कहलाए। बाद में जो कृषि कर्म करने लगे वे कृषक तथा शिल्प करने वाले शिल्पी कहलाए। दास, स्वामी की संपत्ति कहलाते थे। दासों, शिल्पियों और कृषिकों के बीच में श्रम, शोषण, मजदूरी, भुखमरी, उत्पीड़न, भूख–अकाल के समय स्वामी की संपत्ति आदि की लूट को लेकर संघर्ष शुरू हुए। स्वामी ने अपनी ओर से लड़ने के लिए लठैत तैयार किए, मामलों के फैसलों के लिए मुखिया और फिर दासों की बंदी के लिए बाड़े तैयार कराए। वहीं बाद में पुलिस, कारागार, न्यायालय, न्यायधीश एवं राजा सामंत की उत्पत्ति हुई। शोषक और शोषित वर्ग का संबंध स्थापित हुआ और यहीं राज्य नामक संस्था का रूप लिया। इस प्रकार से राज्य नाम संस्था का निर्माण एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग पर नियंत्रण रखने के लिए स्थापित हुआ। अतः राज्य एक वर्गीय संस्था है।

राष्ट्र का स्वरूप एक वर्गीय संस्था का है। अतः यह शोषक वर्ग के हितों की रक्षा के लिए सबसे बड़ा साधन है। सामंतीकाल में यह संस्था बड़े–बड़े सामंतों द्वारा श्रमिक, कृषक, शिल्पी वर्गों के शोषण का साधन बनी। आजकल पूंजीवादी युग में इसकी सहायता से पूंजीवादी श्रमिक, शिल्पी, कामगार, किसानों, दलितों और आदिवासियों का शोषण कर रहे हैं। मार्क्स के शब्दों में – ''राज्य केवल ऐसा यंत्र है, जिसकी सहायता से एक वर्ग दूसरे का शोषण करता है।''

शोषक वर्ग राज्य का दुरूपयोग मजदूरों पर अपना नियंत्रण बनाए रखने के लिए प्रत्येक क्षेत्र में करता है। शिक्षण संस्थाओं में उन्हें यही सिखलाया और पढ़ाया जाता है कि राज्य के आदेश का पालन किया जाना चाहिए। कर्तव्य का पालन और नम्रता के गुण अपनाने चाहिए। इसी प्रकार मठ, मंदिर, गिरजाघर, मस्जिद और गुरुदारा आदि में आस्था, विश्वास और भाग्यवाद का पाठ पढ़ाते हुए बतलाया जाता है कि राज्य के आदेश का विरोध करना पाप है।

राज्य के वर्ग विभेद की प्रकृति पर बल देते हुए मार्क्स का कहना है कि वर्ग विभेद समाप्त होने और वर्गविहीन समाज की स्थापना हो जाने पर राज्य विलुप्त हो जाएगा और हर व्यक्ति को सुख–समृद्धि प्राप्त होगी। हर हाथ को काम, हर पेट को रोटी और हर नंगे बदन को साबित वस्त्र मिलेगा। इससे स्पष्ट है कि राष्ट्र सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक, भाषाई, संप्रभुता, मिथकीय एवं लोक परंपराओं का एक गुंफन है। राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता का भावगत विचारधारा है जो उन लोगों में उत्पन्न होती है, जिनका देश, धर्म, नस्ल, भाषा, साहित्य, इतिहास, सामाजिक, आर्थिक, एवं राजनीतिक आकांक्षाएं एक समान होती है।

डॉ. अंबेडकर के शब्दों में राष्ट्रीयता एक सामाजिक चेतना है, एकता के संयुक्त भावों का आभास ही राष्ट्रीयता है। जिसमें व्यक्ति एक दूसरे को अपना सगा–संबंधी समझने लगता है। यह एक प्रकार की श्रेणी के होने की भावना है।

राष्ट्रवाद या राष्ट्रीयता के प्रमुख तत्व
1. भौगोलिक निश्चितता
2. नस्लीय (प्रजाति) एकरूपता
3. भाषाई एकरूपता
4. मिथकीय–पौराणिक एकरूपता
5. धार्मिक–पंथीय विचारों की एकरूपता
6. ऐतिहासिक एकरूपता
7. राजनीतिक एवं प्रशासनिक एकरूपता
8. सांस्कृतिक एकरूपता
9. सामाजिक एवं नैतिक एकरूपता

इन्हीं तत्वों का संप्रभु की आज्ञानुसार परिपालन ही राष्ट्रवाद है अर्थात राष्ट्रवाद के तत्वों का पालन करना ही राष्ट्रवाद है। अब आता है, बहुराष्ट्रीयता का सवाल। कभी नेपाल का उद्धरण दिया जाता था कि वहां हिंदू राष्ट्र है। कभी दुनिया के तमाम देशों में एक राष्ट्र हुआ करता था, आज वैश्विकरण के युग में हर राष्ट्र बहुराष्ट्रीय हो गया है। आज भारत में पूरी दुनिया है तो पूरी दुनिया में भारत भी है। आज विश्व में कोई राष्ट्र एक राष्ट्र नहीं है। आज इसका रूप बहुत ही विकृत हो गया है –

कोई गर्व से कहता है कि हम हिंदू है,
कोई गर्व से कहता है कि हम मुसलमान हैं।
अरे, मानवता से भी कोई चीज बढ़कर है क्या?
कहना है तो गर्व से कहो कि हम इंसान हैं।।

आज भारत में एक नहीं अनेक राष्ट्र हैं, जिनकी नियति किसी भी दशा में ठीक नहीं है। सभी कहीं ना कहीं एक दूसरे के प्रतिकूल हैं यानी कि मानवता के प्रतिकूल हैं, देश और समाज के प्रतिकूल हैं, कहीं ना कहीं उनमें पक्षपात अवश्य है – ये राष्ट्र हैं –

1. हिंदू राष्ट्र–वसुधैव कुटुंबकम् जगत सत्यं ब्रह्म मिथ्या
2. मुस्लिम राष्ट्र – मानवता
3. सिक्ख राष्ट्र – वाहेगुरू
4. ईसाई राष्ट्र – विश्व कल्याण
5. जैन राष्ट्र – अहिंसा परमोधर्मः
6. बौद्ध राष्ट्र – अहिंसा परमोधर्मः
7. पारसी राष्ट्र – जन कल्याण
8. रविदास राष्ट्र

इनके अतिरिक्त छः और भी राष्ट्र हैं –

1. जनजाति अथवा आदिवासी राष्ट्र
2. एंसीएंट इंडियन शूद्र दलित राष्ट्र
3. वैश्विक (विश्व) राष्ट्र–साम्राज्यवादी औपनिवेशिक
4. श्रमिक अथवा मजदूर राष्ट्र–विश्व मजदूर एक हों
5. शरणार्थी खानाबदोश राष्ट्र
6. अल्पसंख्यक पिछड़ा वर्ग राष्ट्र

उपरोक्त तेरह प्रकार के राष्ट्रों के पास स्वयं की संप्रभुता है, फिर भी इन वर्गीय (अल्पसंख्यक) राष्ट्रों को एक संप्रभु सरकार के अंतर्गत जबरिया एक राज्य का अंग माना गया है। ये मजबूर हैं और विवश होकर एक राज्य के अंतर्गत निवास कर रहे हैं,यदि इन्हे खुला छोड़ दिया जाए, सभी एक अलग राष्ट्र बनाने को तत्पर होंगे, हालांकि वे भी स्वतंत्र होकर भी स्वतंत्र नहीं रह सकेंगे, उनमें भी हिंसक वर्ग खूनी पंजे को धारदार का खून चूसने से बाज नहीं आएगा, विश्व के कई राष्ट्रों में इसका विकृत रूप देखा जा सकता है किंतु भारत वर्ष के अंतर्गत निवास करने वाली अल्पसंख्यक वर्ग की पीड़ाएं भी असहनीय है।

हिंदू राष्ट्र के अंतर्गत आने वाली द्विज जातियां जो संख्या में 15 करोड़ हैं कि समस्याएं कम नहीं हैं, 15 करोड़ मुस्लिम वर्ग अलग पीड़ित है, 2 करोड़ सिख, 2 करोड़ ईसाई, 2 करोड़ जैन, 2 करोड़ बौद्ध, 40 लाख पारसी, 40 करोड़ पिछड़ा वर्ग हिंदू, 8 करोड़ 40 लाख जनजाति तथा 25 करोड़ दलित वर्ग की समस्याएं बेशुमार हैं। इनमें 2 करोड़ शरणार्थी वर्ग अलग ही तड़प रहा है।

इस देश में 10 करोड़ जनजाति के लोग निवास करते हैं, इनकी दारूण दशा को कोई पूछने वाला भी नहीं है। इनके जीवन का आधार ही जो जल, जंगल और जमीन है को छीन लिया गया है। ये हीरे की खानों पर निवास करते हैं और भूख से मरते हैं, कार्पोरेट भेड़िये बिना इन्हें उजाड़े, विस्थापित किए हीरे, सोना, चांदी, निकाल नहीं सकते, इसलिए चंद कौड़ियों में या जबरिया घसीट–घसीट कर निकाल बेदखल कर दे रहे हैं और दुश्मन सरकार जालिमों के साथ सहयोग दे रही है। आज राष्ट्र का पहला और अंतिम चरण सिर्फ आदिवासियों का विस्थापन और उनका शोषण उत्पीड़न ही रह गया है। इनकी भाषा, संस्कृति, औद्योगिक क्षेत्र, जंगल, इनका सुशासन, लोक परंपरा, मिथक और इतिहास है। भारत राष्ट्र का शासन प्रशासन पूर्णतया इनके खिलाफ है। जल, जंगल, जमीन, संस्कृति और पहचान सब छीन लिया गया। जनजाति भारत का अल्पसंख्यक राष्ट्र है। भारत के ही बहुसंख्यक राष्ट्रों के द्वारा नित्य इनका शोषण किया जा रहा है, महाजनी सभ्यता एवं कार्पेरेट सभ्यता ने गुलाम बना लिया है। बल्कि यों कहें कि नरक बना दिया है। नंगी बहन, आंसू, भूख, टीस और पीड़ा ही इनकी नियति बन गई है।

इस देश में दो–ढाई करोड़ शरणार्थी और विस्थापित हैं, खानाबदोश हैं, ये दर–दर की ठोकरें खाने को मजबूर हैं। इसी देश के ये वासी इन्हें कहीं पैर रखने की जगह नहीं है, जहां कहीं ये गंदे नाले के किनारे कूड़े के ढेर पर कूड़े खाकर जीवन व्यतीत करना भी चाहते हैं। सभ्य लुटेरे यह आरोप लगाकर कि ये हिंसक और चोर है, भगा दिए जाते हैं। एक तो इन्हें भगा दिया जाता है, सब कुछ छीन लिया जाता है और शरण तक नहीं दी जाती है।

ईसाई इस देश का अल्पसंख्यक राष्ट्र है। इसकी आबादी आज भारत में ढाई करोड़ है। सन् 1940 ई. में ईसाई मिशनरीज ऑफ इंडिया ने जोरदार आंदोलन कर चार मांगे रखी थी–1. पृथक धार्मिक अस्तित्व की प्रतिस्थापना, 2. राज्य की राजनीति गतिविधियों में हिस्सेदारी, 3. सरकारी नौकरियों में नियुक्तियां तथा 4. शिक्षा व्यवस्था में आधुनिक सुविधाएं, जमीन आदि।

बहुराष्ट्रीयता के सवाल पर डॉ. अंबेडकर ने कहा था कि हमारे देश में अल्पसंख्यकों की उपस्थिति एक हकीकत है, जिनके प्रश्न अनेक बार कई प्रकार की उग्र स्थितियां पैदा कर देते हैं, देश में सांप्रदायिक दंगे तो आम हो गए हैं। 31 दिसंबर 1930 ई. को डॉ. अंबेडकर ने कहा था, दलित अल्पसंख्यक हैं, इसलिए हम उनके लिए पृथक निर्वाचन की मांग करते हैं, हम व्यवहार और अधिकार दोनों में समानता चाहते हैं। अल्पसंख्यक दलित वर्ग को हिंदू से अलग करके देखा जाए।

डॉ. अंबेडकर की मांग को जायज मानते हुए दलित वर्ग को अल्पसंख्यक मानते हुए ब्रिटिश प्रधानमंत्री और भारत सचिव रेम्जे मेक्डोनाल्ड ने 20 अगस्त 1932 ई. को पृथक निर्वाचन के अधिकार की घोषणा कर दी। पृथक निर्वाचन की घोषणा के साथ ही सारे हिंदू जगत में कोहराम मच गया और महात्मा गांधी जो दलित वर्ग के जन्मजात दुश्मन थे, ने पूना के यरवदा जेल में यह कह कर आमरण अनशन शुरू कर दिया कि दलित तो हमारे कलेजे के टुकड़े हैं। देश के सारे चोटी के हिंदू लीडर डॉ. अंबेडकर के चरणों में झुक गए तो डॉ. अंबेडकर को भी झुकना पड़ा और पूना पैक्ट हुआ 24 सितंबर, 1932 ई. को इसके खिलाफ में सारे देश में आंदोलन हुए और पृथक दलित राज्य की मांग उठी। उस मांग को भी दबा दिया गया।

विवेकानंद ने कहा था, ''हमारा मजहब रसोईघर है, हमारा ईश्वर खाना पकाने वाले बर्तन में हैं और हमारा धर्म है–मुझे मत छूओ क्योंकि मैं पवित्र हूं। यदि यही एक और शताब्दी तक रहा तो हम सभी पागलखाने में होंगे।'' इसी संदर्भ में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के गुरू गोलवलकर ने कहा था–मुसलमान या अंग्रेज हमारे शत्रु नहीं थे, हम खुद ही अपने शत्रु हैं। इसके बाद भी हिंदू अपनी पवित्रता की मानसिकता को त्याग नहीं सका और 25 करोड़ दलित और 8 करोड़ 40 लाख जनजाति को अपने से एक होते हुए भी अलग कर दिया।

शूद्र जो इसी देश भारत की सैंधवी तथा शिवालिक इंडियन नस्ल है, इनका अस्तित्व लाखों वर्षो से रहा है। इनकी भाषा, संस्कृति, मिथक एवं इतिहास रहा है। पर शूद्र वर्ग को इसी देश में अन्य आक्रमणकारी राष्ट्रों के द्वारा, दस्यु और गुलाम बनाया गया और इन्हे अछूत, अस्पृश्य कहकर लतियाया गया। धन, धरती और शिक्षा से विहीन कर दिया गया। 15 अगस्त, 1946 ई. को डॉ. अंबेडकर भारत के कानून मंत्री बने और 19 अगस्त, 1947 को संविधान समिति के अध्यक्ष। संविधान सभा की अंतिम बैठक 26 नवंबर, 1949 को समाप्त हुई और इसी दिन 2 वर्ष 11 महीने 18 दिनों में संविधान पूर्ण हुआ। इसी दिन से प्रभावी हो गया। 26 जनवरी, 1950 को भारत को गणतंत्र घोषित कर दिया गया। राष्ट्रीय एकीकरण के प्रयास अनुच्छेद–17 में अस्पृश्यता की समाप्ति, अनुच्छेद–29 (2) में शिक्षा व्यवस्था, अनुच्छेद–19 (1) में सम्पत्ति अर्जन, कोई भी वृत्ति, उपजीविका, कारोबार, व्यापार का अधिकार, अनुच्छेद–21 1 में बेगार प्रथा की समाप्ति, श्रमशोषण की समाप्ति, अनुच्छेद–21 में शोषण के विरूद्ध उपबंध, अनुच्छेद–275 में जनजाति का विकास का प्रावधान अनुच्छेद–325 में समान मताधिकार, अनुच्छेद–330 तथा 332 में लोक सभा, विधानसभा, विधान परिषद में आरक्षण, अनुच्छेद–335 में नौकरी में आरक्षण अनुच्छेद–324 तथा

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

244 में विशेष विशेषाधिकार तथा अनुच्छेद–40 राज्य ग्राम पंचायतों का गठन, स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में। अनुच्छेद–15 में धर्म, जाति, लिंग, मूलवंश, नस्ल आदि के कारण नागरिक भेद–भाव को खत्म किया। अनुच्छेद–38 के द्वारा सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक संरक्षण प्रदान किया। अनुच्छेद–39 में नर–नारी समानता प्रदान की, समान काम, समान वेतन तथा यह निर्देशित किया कि आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले कि जिससे धन और उत्पाद साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी केंद्रण न हो।

पर सच तो यह है कि कोई अनुच्छेद काम नहीं आया। राजीव गांधी ने अनुसूचित जाति जनजाति अत्यचार निवारण अधिनियम–1989 बनाया था। जिसमें लोक सेवक तथा कानून के उल्लंघन कर्ता को भी सजा का प्रावधान था। पर वह कानून गर्म में खो गया। डॉ. अंबेडकर ने 25 दिसंबर, 1927 ई. को मनुस्मृति की होली जलाकर ब्राह्मणवाद के उन्मूलन की नींव रखी थी, पर संविधान ने उसे भी लील लिया। आज जरूरत है कि दलित संविधान संशोधन की मांग करें। देश के तमाम बुद्धिजीवी विभिन्नि प्रकार की राष्ट्रीयताओं की समस्याओं को देखते हुए संविधान संशोधन की मांग करें। संविधान में कहीं नहीं लिखा है कि सरकारी गोदाम भरा है, सड़ाकर समुद्र में फेंक दो और रोज लाखों भूखे मरें, दवा है, अथाह संपत्ति भरी पड़ी है और देश का 40% जनमानस बदहाल और फटेलहाल है, दाने–दाने को मोहताज है और इसके जिम्मेदार लोकसेवक, पदाधिकारी, मठाधीश को, जज को सजा का कोई प्रावधान नहीं है।

क्या भारत गरीब देश है? भारत में 16 करोड़ 80 लाख 40 हजार हेक्टेयर भूमि कृषि के योग्य है। पर अकेले 10 करोड़ हेक्टेयर भूमि आज भी देश के सामंतों, महाजनों और कार्पोरेट के पास है। चीन के पास मात्र 10 करोड़ 90 हजार हेक्टेयर भूमि ही कृषि के योग्य है। पर यहां गरीबी 20% तो भारत में 40%। भारत के बैंकों व डाकघरों में 50 हजार करोड़ रूपया जमा है। बैंकों और टैक्स से खरबों रूपए का लाभ प्रत्येक वर्ष हो रहा है और देश के 6 लाख 80 हजार गांवों में से 2 लाख गांवों में आज भी बद से बदतर स्थिति है। धूल, कीचड़, अस्वास्थ्य और भूखमरी के सिवाय कुछ भी नहीं है। शहरों में बिजली की चकाचौंध है और देश के दो लाख गांवों में आज भी ढिबरी की टिमटिमाहट है।

देश के अन्न भंडार भरे हैं, इतने कि 10 वर्षों तक सारे देश को फ्री खिलाया जा सकता है, पर लाखों लोग प्रत्येक वर्ष भूख से दम तोड़ रहे हैं। हमारे देश की प्रतिभाएं जनशक्तियां वर्षों से पलायन कर रही हैं। जिससे कि 10 अरब रूपए का प्रत्येक वर्ष नुकसान हो रहा है। इसका जिम्मेदार कौन है? निश्चित रूप से देश की व्यवस्था और बहुराष्ट्रीय भावना की अनदेखी। दोमुंहपन और दोगलापन।

25 नवंबर, 1949 ई. को डॉ. अंबेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि मेरा विचार है कि यह मानना कि हम एक राष्ट्र हैं, बहुत बड़ा भम्र पालना है। जो लोग हजारों जातियों, वर्णों, धर्मों व संप्रदायों में बंटे हों वे एक राष्ट्र कैसे हो सकते हैं? हम लोग जितनी जल्दी यह महसूस करें कि हम सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक तौर पर अभी एक राष्ट्र नहीं बन पाए हैं, उतना ही हमारा भला होगा, क्योंकि तभी हम एक राष्ट्र बनने की जरूरत को महसूस कर पाएंगे और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गंभीरतापूर्वक साधनों के विषय में विचार कर सकेंगे।

1818 ई. की भारत की प्रथम जनगणना में तत्कालीन गणना आयुक्त एम.ए.वेल्स ने एस.सी., एस.टी.वर्ग को मूलभारतीय आदिवासी और प्रकृतिपूजक कहा था। 1901 के जनगणना आयुक्त सर हरबर्ट रिसले ने प्रकृति पूजक और हिंदुत्व को अलग–अलग माना और लिखा।

कहने का तात्पर्य है कि भारत आज भी एक राष्ट्र नहीं बल्कि कई राष्ट्रीयताओं का एक संघ राष्ट्र है। महाराष्ट्र है जिसमें हर बहुसंख्यक के द्वारा हर अल्पसंख्यक का शोषण है, उत्पीड़न है, लूट है।

क्या भारत एक राष्ट्र हो सकता है? आज का सबसे बड़ा सवाल। क्या हिंदू मुसलमान हो सकता है? क्या मुलसमान हिंदू हो सकता है? क्या सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध, पारसी क्या एक दूसरे के राष्ट्र को अंगीकार कर सकते हैं? उससे भी बड़ा सवाल वियोगी हरि ने वर्षो पहले जिस विश्व मंदिर की कल्पना की थी, क्या संभव है? आज सी.एम.एस. के गांधी आजाद विश्व राष्ट्र की कल्पना कर रहे हैं, क्या यह संभव है? आज से डेढ़ हजार वर्ष पहले आदिशंकराचार्य ने विश्व राष्ट्र की कल्पना की थी और अपने ही भाई 25 करोड़ दलितों को दुत्कार दिया था और नारा दिया था–वसुधैव कुटुंबकम्। क्या विश्व एक कुटुम्ब हो पाया? नहीं, क्योंकि विश्व राष्ट्र के लिए नारा था, वसुधैव कुटुम्बकम् और भारत में नारा दिया था। स्त्री शूद्रौ नाधियताम– स्त्री शूद्र को शिक्षा नहीं, शूद्र ब्राह्मण से बहत्तर हाथ दूर रहें, 2. आर्यवाद 3. हिंदुत्व 4. ब्रह्मसत्यं जगत मिथ्या। और इस जगत को लूटने को क्या–क्या नहीं किया?

राष्ट्रीय एकीकरण एक मनोगत भावना है, जो विभिन्न प्रकार के मेढ़कों को एक बोरे में बंद करने के समान है। समाजिक, सांस्कृतिक, भाषाई, धार्मिक एवं नस्लीय भेद–भाव को भुलाकर राष्ट्रीय एकीकरण संभव है, पर यह कभी संभव नहीं है। राष्ट्रीय एकीकरण के निम्नांकित बाधक तत्व हैं–

1. भौगोलिक असमानता 2. असंगत संप्रभुता
3. असंगत राज्य व्यवस्था 4. असंगत विवरण प्रणाली
5. एकपक्षीय कार्यपालिका औन न्यायपलिका
6. विधायिक का असंगत गठन 7. विक्षिप्त मानसिकता
8. क्षेत्रवाद या क्षेत्रीयता 9. भाषावाद
10. सांस्कृतिक–या संस्कृततिवाद
11. सांस्कृतिक राजनीतिक आकांक्षा
12. सामाजिक अन्याय (विषमता)
13. सांप्रदायिक मनःस्थिति
14. जातिवादी मानसिकता (ब्राह्मणवाद)
15. धार्मिक पूर्वाग्रह 16. उग्रपंथी विचारधारा
17. स्वार्थपूर्ण कुटिल नेतृत्व
18. अवैज्ञानिक दिशाहीन शिक्षा व्यवस्था
19. वैश्विकीरण की लालीपाप
20. आर्थिक विषमता और दरिद्रता

आर्थिक विषमता वो खाई है, जिसे पाटना शायद असम्भव है, बहुराष्ट्रीय खूनी कंपनियां तो इसकी दुश्मन हैं ही, इनके दलालों की कभी कोई कमी नहीं, बल्कि भरमार है। जहां साम्राज्यवाद पूंजी का विशाल पहाड़ खड़ा कर लिया है, वहीं 40% आम श्रमिक जनता आंसू के घूंट पीकर जी रही है। कथरी में अपनी जिंदगी गुजार रही है। आदिम साम्यवाद को साम्यवाद बनने से पूंजीपतियों, उनके पिट्ठू दलालों तथा उनकी गुलाम सरकारों ने रोका है और एक और मुख्य कारण है वो ये है कि साम्यवादी प्रबुद्ध वर्ग आम अरबों जनशक्ति को सचेत नहीं कर सका है। मार्क्स, लेनिन, स्टालिन, माओ और अंबेडकर ने एक अच्छी पहल की थी जिसे ब्राह्मणवादी, सामंतवादी और पूंजीवादी खूनी पंजों ने चिथड़े–चिथड़े कर दिया।

भारत में गांधीवादी कुनीति, धर्मनीति और रामराज की परिकल्पना को निरर्थक प्रयास करने अर्थहीनता ने ज्यादा बेड़ा गर्क कर लिया है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एडगर सनो से एक वार्तालाप में कहा था– ''मैं ऐसे किसी धर्म से कोई नाता नहीं रखना चाहता जो जनता को भूख, गंदगी और अज्ञान में संतुष्ट रखता है। मैं ऐसी किसी व्यवस्था, धार्मिक या दूसरों से कोई संबंध नहीं रखना चाहता, जो लोगों को यह नहीं सिखाती कि वे इसी दुनिया में इसी धरती पर और ज्यादा प्रसन्न एवं ज्यादा सभ्य होने के योग्य हैं। सच्चे इंसान अपने भाग्य विधाता और अपनी आत्मा के कर्णधार बनने के योग्य हैं, इसकी प्राप्ति के लिए मैं पुरोहितों को काम में लगा दूंगा और मंदिरों को मैं स्कूलों में परिवर्तित कर दूंगा। पर क्या नेहरू, क्या गांधी क्या कोई अन्य सब के सब नेतृत्व सिर्फ लफ्फाज ही निकले। राष्ट्रीय एकीकरण तो सिर्फ राजनेताओं की जुगाली थी।

डॉ. अंबेडकर ने इसीलिए एक चेतावनी दी थी–''यदि हिंदू राज एक हकीकत बन जाता है तो निःसंदेह या देश के लिए एक बहुत बड़ी आपदा होगी, हिंदू चाहे कुछ भी कहे हिंदूवाद समता, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के लिए एक खतरा है। इस कारण यह लोकतंत्र बेमेल है, हिंदूराज की स्थापना को हर कीमत पर रोकना होगा।'' रेलवे कर्मचारियों को मनमाड में 12–13 फरवरी, 1938 में भाषण देते हुए कहा था कि हमें राष्ट्रीय एकीकरण के लिए राष्ट्रीयताओं को चिन्हित करना होगा और 1. ब्राह्मणवाद की समाप्ति, 2. पूंजीवाद की समाप्ति अनिवार्य है। इसी उद्देश्य के लिए 17 दिसंबर, 1946 ई. को डॉ. अंबेडकर ने राज्य समाजवाद की योजना पेश की थी और राज्य समाजवाद की सफलता के लिए उन्होंने जमीन के राष्ट्रीयकरण, बैंक, बीमा के राष्ट्रीकरण, शिक्षा के राष्ट्रीयकरण एवं उद्योग के राष्ट्रीकरण की बात की थी।

कुल मिलाकर जब तक जनजाग्रति नहीं होगी, सोए हुए श्रमिक शेर नहीं जागेंगे और जब तक हम दलित, पीड़ित मजलूम नहीं जागेंगे साम्राज्यवाद पर नकेल नहीं लग सकती। आज समय की जरूरत है टाटा, बाटा, बिड़ला, बुश और कार्लाइल तोसीबा जैसे पूंजीपतियों के शोषणवृत्ति के खात्मे की। इनकी अथाह संपत्ति को राज्य संपत्ति में परिवर्तित करने की। यह संभव है जनआंदोलन से और जहां तक मैं समझता हूं जन आंदोलन की आग भारत की धरती पर भी लग चुकी है आशा है सीटू एक भारतीय अक्टूबर (1917) की राज्य क्रांति की।

क्रांति का प्रथम हथियार है शिक्षा। शिक्षा वो शेरनी का दूध है, जो पीएगा निश्चय ही गुर्राएगा। पर जातिवादी, धर्मवादी, अलगाववादी शिक्षा नहीं, विकास, विज्ञान और सचेतन शिक्षा। एक पूर्ण शिक्षित व्यक्ति क्रांति की मशाल बन जाता है। वास्तव में शूद्रों और सर्वहारा समाज की खुशहाली का केवल एक शिक्षा ही उपाय है। शिक्षा से मनुष्यत्व प्राप्त होता है, पशुत्व नष्ट होता है और सर्वजनसुखाय की प्राप्ति होती है। शिक्षा के लिए ज्योतिबा फूले ने कहा है–

उठो बंधुओं! अति शूद्रों जाग्रत हो उठो
परंपरा की गुलामी नष्ट करने के लिए उठो
बंधुओं! शिक्षा के लिए उठो!!

डॉ. अम्बेडकर ने कहा था – "Brahmin is the poison which has spoiled hinduism. " अर्थात ब्राह्मणवाद वह विष है, जिसने पूरे हिंदूस्तान को दूषित व भ्रष्ट किया है।'' डॉ. अम्बेडकर ने ब्राह्मणी मतिभ्रांति को मानवता का शत्रु माना है और कहा है कि –1. इस प्रतिक्रांति ने राजवध यानी राजा की हत्या करने और राज्य करने का ब्राह्मण का अधिकार स्थापित किया, 2. इससे ब्राह्मण वर्ण का विशेषाधिकार युक्त वर्ग निर्मित किया, 3. ब्राह्मणी प्रतिक्रांति ने वर्ण को जाति में परवर्तित किया, 4. इससे विभिन्न जातियों में कलह और समाज विरोधी भावनाएं पैदा की, 5. इसने शूद्रों और स्त्रियों का मान भंग किया, उनको नीच बनाया और अपमानित किया, 6. इसने क्रमवार असमता की पद्धति को गढ़ा तथा 7. इसने रूढ़ (परंपरा) और लचीली सामाजिक व्यवस्था को कड़ा और कानूनी रूप दिया।

इससे स्पष्ट होता है कि कहीं न कहीं इन नेतृत्वों में ही खोट था। यदि ऐसा न होता तो एक वर्ग इतना सुखी और दूसरा वर्ग इतना दुखी कतई न होता। प्रसिद्ध शायद फैज अहमद 'फैज' ने ठीक ही कहा है कि –

हर चार, गर को चार, गरी से गुरेज था,
वरना हमें दो दुख थे लादवा न थे।।

अर्थात वैद्य ने जानबूझकर हमारे इलाज नहीं किया, वरना हमारे रोग कतई लाइलाज नहीं थे।

प्रमुख संदर्भ और टिप्पणियां

1. डॉ. सोहन लाल सारस्वत– राजनीतिशास्त्र, गंथम, साकेत नगर, कानपुर प्रथम संस्करण– 1995 पृष्ठ 63/64
2. एल.आर.बाली डॉ. अंबेडकर ने क्या किया?
3. Socio Political Views of PRVEMPD P-25
4. एल. आर. बाली –डॉ. अंबेडकर ने क्या किया?
5. डॉ. अंबेडकर संपूर्ण वांग्मय–खंड–5 पृष्ठ–48
6. एल. आर.बाली–डॉ. अंबेडकर ने किया?
7. एम.एल. गुप्ता समाजशास्त्रीय निबंध
8. पाकिस्तान और भारत का विभाजन, बाम्बे–1946 पृष्ठ–13
9. सेंसस ऑफ इंडिया–1/1 पृष्ठ–158
10. द पीपुल्स ऑफ इंडिया–संस्करण द्वितीय, पृष्ठ–218
11. सेंसस ऑफ इंडिया–1921, बिहार–उड़ीसा रिपोर्ट
12. एल.आर. बाली–डॉ. अंबेडकर ने क्या किया?
13. गोलवलकर–बंच ऑफ थॉट्स (विचार नवनीत)
14. जवाहर लाल नेहरू–एडगर सनो जर्नी ऑफ दी बिगनिंग, पेज–77
15. डॉ. अंबेडकर–राइटिंग एंड स्पीचेज, बम्बई–1990 खंड–8 पृष्ठ–358
16. ज्योतिबा राव फूले – वामसेफ प्रकाशन
17. राष्ट्रपिता ज्योतिराम फूले – डी.के. खापर्डे.
18. वसुधा–दलित अंक–58
19. एल.एल. दुसाध–डाइवर्सिटी–ईयर बुक–2006
20. बी.एन. गौड़–सामाजिक चिंतन

साभार
शूद्रों का प्राचीनतम इतिहास
पृष्ठ सं० 392 से 402 तक
एस.के. पंजम

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

समय परिवर्तन या ब्राह्मण यह कैसे घोषित करते हैं कि वेद उनके सभी शास्त्रों से तुच्छ हैं?

हिन्दुओं के धार्मिक साहित्य में 1. वेद, 2. ब्राह्मण, 3. आरण्यक, 4. उपनिषद, 5. सूत्र, 6. इतिहास, 7. स्मृति और 8. पुराण, शामिल हैं।

जैसा कि कहा गया है, एक समय उनका महत्व एक समान था। उनके बीच श्रेष्ठता अथवा हीनता, पवित्रता अथवा लौकिकता, संशय अथवा संशय हीनता का कोई भेद नहीं था।

बाद में, जैसा कि हमने कहा है, वैदिक ब्राह्मणों ने सोचा कि वेदों और दूसरे धार्मिक साहित्य में अंतर होना चाहिए। उन्होंने वेदों को न केवल अन्य साहित्य से श्रेष्ठ घोषित कर दिया, अपितु उन्हें पावन और अमोघ भी बना दिया। वेदों को संशयरहित स्थापित करने के सिद्धांत को प्रतिपादित करते हुए उन्होंने पवित्र ग्रंथो को दो वर्गों में विभाजित कर दिया। 1. श्रुति और 2. अश्रुति। प्रथम विभाजन में उन्होंने आठ अंगों में से केवल दो को श्रेष्ठ रखा। 1. संहिता और 2. ब्राह्मण। शेष को उन्होंने अश्रुति घोषित कर दिया।

यह बताना संभव नहीं कि यह अंतर सर्वप्रथम कब उत्पन्न हुआ। परन्तु यह प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण है कि किस आधार पर यह भेद किया गया। इतिहास और पुराणों को क्यो छोड़ दिया गया? आरण्यक और उपनिषद क्यों छांट दिए गए? सूत्रों को क्यों छोड़ दिया गया? यह तो समझा जा सकता है कि इतिहास और पुरणों को श्रुति से क्यों वंचित किया गया। जिस समय यह भेद किया गया, तब ये इतने आरंभिक और अविकसित थे कि उन्हें शायद ब्राह्मणों में सम्मिलित कर लिया गया। साथ ही यह बात भी समझ में आती है कि आरण्यकों का श्रुति के अंग के रूप में उल्लेख करना अनावश्यक था कि ये श्रुति का अंग है। उपनिषद और सूत्रों का प्रश्न एक पहेली बना हुआ है। इन्हें श्रुति से अलग क्यों रखा गया? उपनिषदों के प्रश्न पर एक अन्य अध्याय में अलग से विचार किया गया है। यहां तो सूत्रों के बारे में विचार करना है क्योंकि सूत्रों को समाहित न करने का पार पाना कठिन है। यदि यह बात तर्कसम्मत है कि ब्राह्मणों को श्रुति में सम्मिलित किया जाना चाहिए तो उसी कसौटी पर यह बात खरी नहीं उतरती कि सूत्रों को शामिल क्यों न किया जाए? जैसा कि प्रोफेसर मैक्समूलर कहते हैं :

''हम इस बात को समझ सकते हैं कि किस प्रकार कोई देश अपनी राष्ट्रीय काव्य रचना का श्रेय किसी अलौकिक पुरूष को दे सकता है। विशेष रूप से तब जब कि उस काव्य में देवों को संबोधित प्रार्थनाएं और मंत्र समाविष्ट हों। परन्तु ब्राह्मण ग्रंथों के गद्य–साहित्य के विषय में यह कहना कठिन है। ब्राह्माण ग्रंथ स्पष्ट रूप से मंत्रों की अपेक्षा बाद की रचनाएं हैं। इसी कारण इन्हें श्रुति में समाहित किया गया होगा कि इनकी सामग्री ब्रह्म–ज्ञान से मुक्त है और उनकी विषय–सामग्री साधारण और प्राचीन मंत्र नहीं है। ब्राह्मण ग्रंथों के अधिकांश दावो के बारे में यह कल्पना की गई होगी कि इनकी रचना ईश्वरीय है जिनका उदगम सामान्य रहा अथवा मंत्र नहीं हो सकते। किन्तु हमें इस तर्क को मान्यता देने की आवश्यकता नहीं, जिसके कारण ब्राह्मण ग्रंथों ने अपने को मंत्र रचना के समकालीन बताया है। इसका कोई कारण समझ में नहीं आता कि जब ब्राह्मण ग्रंथो और मंत्रो का रचनाकाल अधिक प्राचीन है तो हम इस सहज विचार को क्यों अस्वीकार कर दें कि यदि सूत्रों और भारत के लौकिक साहित्य की तुलना की जाए तो उनका महत्व समान बनता है। ऐसी घटना सामान्य है, जहां पवित्र ग्रंथों का यह नियम है कि बाद की रचनाओं को प्राचीन रचनाओं से ही जोड़ दिया जाता है जैसा कि ब्राह्मण ग्रंथों के साथ हुआ। किन्तु हम कठिनाई से ही यह विश्वास कर सकते हैं कि जब तक कोई पक्ष इन उपेक्षित रचनाओं के सिद्धांत विशेष की प्रामाणिकता अमान्य घोषित करने के लिए प्रयत्नशील न हो, पुराने और युक्ति–युक्त अंशों को पवित्र रचनाओं से हटा दिया जाए और उन्हें बाद की रचनाएं बता दिया जाए। तब तक ऐसी कल्पना को कोई आधार नहीं है फिर सूत्रों के साथ ऐसा क्यों हुआ। हमें ब्राह्मण और मंत्रों की उपेक्षा उनके परवर्ती होने के सिवाय ऐसा कोई कारण नहीं दिखता कि सूत्रों को श्रुति न बनाया जाए। क्या ब्राह्मण ग्रंथकारों को स्वयं ज्ञात था कि ऋषियों की अधिकांश रचनाओं और ब्राह्मण ग्रंथों के उद्भव के बीच युगों का अंतराल है। इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है। किन्तु जिस दुस्साहस के साथ भारतीय ब्रह्मज्ञानियों ने ब्राह्मण ग्रंथों को वही पद और उनका काल मंत्रों के समान निर्धारण किया, उससे यह प्रकट होता है कि इसका कोई विशिष्ट कारण रहा होगा कि सूत्रों को उतनी ही पावनता और प्राथमिकता न दी जाए।''

सूत्रों को श्रुति की श्रेणी में न रखना एक पहेली है जिसका निराकरण किया जाना चाहिए।

इस विषय पर अनुसंधान करने वाले विद्वानों के समक्ष अन्य कूट प्रश्न भी हैं। उनका संबंध सूत्रों की श्रेणी में आने वाले साहित्य की विषयसामग्री में परिवर्तन और उनकी सापेक्ष प्रामाणिकता से है।

एक कूट प्रश्न साहित्य की उस श्रेणी से सम्बद्ध है जिसे ब्राह्मण कहा जाता है। एक समय ब्राह्मण ग्रंथ श्रुति की श्रेणी में आते थे। परन्तु लगता है, कालांतर में उनका वह स्थान नहीं रहा। स्मृति के निम्मांकित उद्धरण को देखने से लगता है कि मनु ने ब्राह्मण ग्रंथों को श्रुति की श्रेणी से हटा दियाः

''श्रुति का अर्थ है वेद और 'स्मृति' का अर्थ है विधान। इनकी विषय–सामग्री पर तर्क नहीं किया जा सकता क्योंकि इनमें कर्तव्य बोध है। ब्राह्मण ग्रंथ, जो बुद्धिवादी लेखों पर आधारित हैं, वे ज्ञान के इन दो स्त्रोतों की निंदा करें तो उन्हें संशयवादी और निदंक जानकर बहिष्कृत किया जाए ..... जो कर्तव्य बोध चाहते हैं, उनके लिए श्रुति सर्वोच्च सत्ता है।

ब्राह्मण ग्रंथों को श्रुति से क्यों निकाला गया?''

अब हम साहित्य की उस श्रेणी पर आते हैं जो स्मृति कहलाता है। जिसमें से सबसे महत्वपूर्ण मनुस्मृति और याज्ञवल्क्य स्मृति हैं। स्मृतियों की संख्या लगातार बढ़ती रही और यह सिलसिला अंग्रेजों के आगमन तक जारी रहा। मित्रमिश्र 57 स्मृतियों का, नीलकंठ 97 का और कमलाकर 131 स्मृतियों का उल्लेख करते हैं। हिन्दुओं द्वारा पवित्र समझे जाने वाले धार्मिक साहित्य में स्मृति साहित्य अपेक्षाकृत अधिक है।

वेदों और स्मृतियों के बीच संबंध के बारे में अनेक बातें हैं।

पहली बात यह है कि जैसा बौधायन, गौतम और आपस्तम्ब को धर्मशास्त्र का स्थान प्राप्त था, स्मृति को वह मान्यता प्राप्त नहीं थी। स्मृति का संबंध मूल रूप से संस्कारों और परम्पराओं से था, समाज के विद्वान उसकी अनुमति देते और अनुशंसा करते थे। जैसा कि प्रोफेसर अल्तेकर का मत हैः

आरम्भ में अपने लक्षण और विषय–सामग्री के कारण स्मृति सदाचार के समान थी और वही उनका आधार था। स्मृतियां अस्तित्व में आईं तो स्वाभाविक था सदाचार की परिधि सिमट गई, क्योंकि अधिकांशतः सहिताओं में बांध लिया गया था। उन्होंने उन प्राचीन प्रथाओं से जोड़ना आरंभ कर दिया गया जो स्मृतियों में संहिताबद्ध नहीं थी अथवा जो नवीन थी और वे आरम्भिक धर्मशास्त्रों तथा स्मृतियों में संहिताबद्ध हो गई थी इस कारण सामाजिक मान्यता प्राप्त हो गयी थी।

दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि स्मृतियां वेद और श्रुति से भिन्न समझी जाती थी। जहां तक उनकी मान्यता और प्रामाणिकता का प्रश्न था, उनका आधार नितांत भिन्न था। श्रुतियों को देवी मान्यता थी। स्मृतियों की मान्यता सामाजिक थी। उनकी प्रामाणिकता के संबंध में पूर्व मीमांसा में दो नियमों का प्रावधान किया गया था। प्रथम नियम यह है कि यदि श्रुति के दो पाठों में भिन्नता है तो दोनों प्रामाणिक थे, और यह समझा जाता था कि वेदों ने यह विकल्प किया हुआ था कि उनमें से किसी एक को स्वीकार कर लिया जाए। दूसरा नियम यह है कि यदि स्मृति का कोई पाठ श्रुति के विपरीत है तो उसे तत्काल रद्द कर दिया जाए। यह नियम कठोरता से पालन किए जाते थे और इसका परिणाम यह हुआ कि स्मृतियों को न तो वेदों के समान स्थान मिला और न प्रामाणिकता।

यह आश्चर्यजनक बात है कि एक समय ऐसा आया जब ब्राह्मणों ने कलाबाजी खाई और स्मृतियों को वेदों से श्रेष्ठ घोषित कर दिया। प्रोफेसर अल्तेकर ने कहा हैः

स्मृतियों ने श्रुतियों के कुछ सिद्धांतों को वास्तव में निरस्त कर दिया जो तत्कालीन युग की भी भावना के अनुरूप नहीं थे अथवा जिनका स्मृतियों से टकराव था। वैदिक परम्परा के अनुसार प्रातः देव कर्म और दोपहर बाद पितृ कर्म करने का विधान था। कालांतर में पितृ तर्पण लोकप्रिय हो गया और प्रातःकाल किया जाने लगा क्योंकि प्रातः स्नान दैनिक कार्यों में सम्मिलित हो गया। यह तरीका उपरोक्त नियम के अनुसार वैदिक प्रथा का प्रत्यक्ष उल्लंघन था। स्मृति–चंद्रिका के लेखक देवभट्ट ने कहा है कि इसमें कोई हर्ज नहीं है। श्रुति नियम को समझा गया कि उसमें पितृ–तर्पण का उल्लेख है। पितृ–कर्म का नहीं। श्रुति साहित्य से ज्ञान होता है कि विश्वामित्र ने शुनःशेप को गोद ले लिया था। यद्यपि उनके स्वयं एक सौ पुत्र जीवित थे। इस प्रकार यह अनुमति मिलती है कि किसी व्यक्ति के भले ही उसके अपने अनेक पुत्र जीवित हों, वह किसी अन्य के पुत्र को गोद ले सकता है। परन्तु मित्रमिश्र का कथन है कि यह व्यवस्था दोषपूर्ण है। हम यह कल्पना कर सकते हैं कि स्मृतियों की प्रथाऐं भी श्रुति व्यवस्थाओं पर आधारित हैं जो इस समय उपलब्ध नहीं है परन्तु उनका अस्तित्व माना जा सकता है।

वैदिक कथन ''ना शेषो 'ज्ञेन्याजातमस्ति'' पुत्र गोद लेने की प्रथा के विरुद्ध है जिसे कालातीत में स्मृति साहित्य में अनुसंशित किया गया। यह एक स्पष्ट उदाहरण है कि किस प्रकार स्मृति ने श्रुति को ठिकाने लगा दिया। परन्तु मित्रमिश्र का कथन है कि इस प्रथा में कोई दोष नहीं हैं। श्रुति का कथन मात्र अर्थवाद है। यह अपनी ओर से कोई निर्देश नहीं देती। दूसरी ओर स्मृतियों ने दत्तक पुत्र की व्यवस्था की है जिससे कि होम आदि उपयुक्त रीति से सम्पन्न हो सकें। इस प्रकार स्मृति के पाठ द्वारा अर्थवाद श्रुति पूर्णतः निरस्त कर दिया, जिसने ऐसा विधान किया था।

कालांतर में वैदिक निर्देशों के विपरीत सती प्रथा शुरू हुई। वेद आत्महनन के विरोध में है। फिर अपरार्क ने तर्क दिया है कि श्रुति के साथ भिन्नता होने से वह प्रथा अवैध नहीं हो जाती क्योंकि श्रुति में एक सामान्य सिद्धांत के रूप में आत्महत्या का निषेध किया गया है। जबकि स्मृति में विधवा के संबंध में इसके अपवादों की व्यवस्था की है।

सती प्रथा और दत्तक प्रथा ठीक है अथवा नहीं। यह एक भिन्न प्रश्न है। समाज ने किसी भी प्रकार उन्हें स्वीकार कर लिया। स्मृतियों ने उन्हें सैद्धांतिक मान्यता दे दी और वेदों की सत्ता के विरुद्ध मान्यता देने के लिए कहा।

प्रश्न यह है कि वेदों की श्रेष्ठता के लिए इतने दिन तक संघर्ष कर के वेदों का स्थान गिरा कर स्मृतियों को क्यों वेदों के ऊपर शिरोधार्य किया गया? उन्होंने वेदों को देवों से भी अधिक मान्यता दी फिर उन्हें घसीटकर स्मृतियों से भी नीचे क्यों डाल दिया जबकि स्मृतियों को मात्र सामाजिक मान्यता प्राप्त थी?

उन्होंने जो उपाय किए, वे इतने विद्ग्ध और कृत्रिम थे कि हमें संशय हो सकता है कि कोई निश्चित इरादा अवश्य होगा कि स्मृतियों को वेदों से श्रेष्ठ माना जाने लगा।

यह स्पष्ट करने के लिए कि उनके तर्क कितने कृत्रिम, भ्रामक, और कुंठित थे, यह उचित होगा कि उनका संक्षिप्त विवरण दिया जाए।

एक कृत्रिम तर्क का उदाहरण सामने आता है जब हम बृहस्पति के कथन पर विचार करते हैं। उनके अनुसार श्रुति और स्मृति ब्राह्मण की दो आखें हैं। यदि उनमें से एक फूट जाएगी तो वह एकाक्षी रह जाएगा।

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

एक कुतर्क के रूप में कुमारिल भट्ट की दलील पर भी विचार किया जा सकता है। उनका तर्क अनुपलब्ध श्रुति के सिद्धांत पर आधारित है। स्मृतियों के नाम पर यह कहा गया कि उनके मत को रद्द नहीं किया जा सकता चाहे वह श्रुति के प्रतिकूल भी क्यों न हों? क्योंकि हो सकता है कि वास्तविक रूप में यह विद्यमान श्रुति एवं अनुलब्ध श्रुति के बीच तारतम्य हो। इस प्रकार स्मृति को अनुपलब्ध श्रुति बना दिया गया।

ब्राह्मणों ने स्मृतियों को वेदों से श्रेष्ठ भी नहीं तो उनके समान स्थान देते हेतु एक तीसरा उपाय खोजा। यह अत्रि स्मृति में प्राप्य है। अत्रि का कहना है कि जो स्मृतियों की सत्ता स्वीकार नहीं करते, वे शाप के भागी हो सकते हैं। अत्रि का सिद्धांत है कि ब्राह्मण श्रुति और स्मृति के संयुक्त अध्ययन की परिणति है। यदि कोई व्यक्ति मात्र वेदों का पाठ करता है और स्मृति की अवमानना करता है तो उसे तत्काल यह शाप दिया जा सकता है कि वह 21 योनियां तक वन्य जंतु बने।

ब्राह्मणों ने स्मृतियों को श्रुति के समान रखने के ऐसे उपाय क्यों किए? उनका उद्देश्य क्या था? उनका अभिप्राय क्या था?

प्रोफेसर अल्तेकर का कहना है कि स्मृतियों को वेदों की अपेक्षा उच्चता इस कारण दी गई है कि कालांतर में स्थापित परम्पराओं को विधि–विधान के रूप में वैधता के औचित्य को चुनौती दी जा सकती थी। यदि यही बात थी तो वैदिक काल में भी विधि–विधान थे, प्रथाएं बाद में पड़ी और यदि दोनों के बीच कोई भिन्नता हो तो इस तर्क को समझा जा सके कि स्मृतियों के प्रगतिशील सिद्धांतों को मान्यता इस कारण दी गई कि उनमें टकराव दूर कर दिया गया था। बात ऐसी नहीं है। वेदों में विधि–विधान नहीं है। प्रोफेसर काणे का मत है:

''सभी कानून प्रथाओं के रूप में थे और प्रथाओं को मान्यता प्रदान करना आवश्यक नहीं था क्योंकि वे नागरिकों द्वारा मान्यता प्राप्त थे। दूसरे, स्मृतियों को वेदों की अपेक्षा प्रगतिशील नहीं कहा जा सकता। चातुर्वर्ण्य के सिवाय जिनके विषय में सर्वविदित है कि पूजा अर्चना को छोड़कर समाज में विकास के सभी द्वार खुले थे। स्मृतियों ने वेदों के अप्रगतिशील तत्वों जैसे चातुर्वर्ण्य सिद्धांत को ले लिया तथा उसका जमकर प्रचार किया और उन व्यवस्थाओं का समाज के एक वर्ग के मत्थे मढ़ दिया।

इसी प्रकार कुछ और कारण भी हो सकते हैं, जिनके आधार पर ब्राह्मणों ने वेदों की अपेक्षा स्मृतियों को अधिक सम्मान दिया।''

ब्राह्मणों को अपनी पहली कलाकारी से संतोष न हुआ। उन्होंने एक चाल और चली।

कालांतर में स्मृतियों के पश्चात पुराण आए। वे कुल मिलाकर 36 हैं। इसमें 18 पुराण और उतने ही उप–पुराण हैं। एक प्रकार से तो सभी पुराणों की विषय–सामग्री समान है। उनका कथ्य, विश्व की सृष्टि, पालन और संहार है। परन्तु अन्य विषयों में उनकी सामग्री नितांत भिन्न है। कुछ ब्रह्मा के उपासक हैं, कुछ शिव के और कुछ विष्णु के, कुछ में वायु की, अग्नि की, और सूर्य की उपासना है तथा कुछ में अन्य देवी–देवताओं का गुणगान है।

यह बताया जा चुका है कि एक समय था जब पुराण श्रुति नहीं थे। किन्तु तदुपरांत एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। पुराणों को जिन्हें श्रुति से अलग रखने का कारण उनकी नितांत लौकिकता बताया गया था, अब वे वेदों से भी श्रेष्ठ हो गए।

सर्वप्रथम सभी शास्त्र, पुराण ब्रह्मा के मुख से प्रस्फुटित हुए। तदुपरांत वेद।

मत्स्य पुराण वेदों से केवल पूर्ववर्ती होना ही घोषित नहीं करता बल्कि वह उनकी अनंतता के गुणों का नाद के साथ पहचान को भी श्रेष्ठ मानता है। पहले केवल वेदों को इन गुणों से सम्पन्न बताया जाता था।

वह कहता है:

सर्वप्रथम अविनाशी पितामह (ब्रह्म) उत्पन्न हुए, फिर वेद। उसके अंगोपांग तथा उनके पाठ के विभिन्न साधन जन्में और प्रकट हुए। ब्रह्मा ने जिन शास्त्रों को जन्म दिया उनमें सैकड़ों कोटि मंत्रों वाले सनातन, नाद–जनित शुद्ध शास्त्र, पुराण प्रथम थे फिर उनके मुख से वेदों का उद्गम हुआ, तभी मीमांसा और न्याय और अष्ट प्रमाण सिद्धांत जन्मे।

भागवत पुराण वेदों के समान प्रामाणिकता का दावा करता है। वह कहता है:

ब्रह्मार्त का निर्णय है कि पुराण भागवत कहलाता है जो वेदों के समान है।

ब्रह्मवैवर्त पुराण ने साधिकार दावा किया है कि वह वेदों से श्रेष्ठ है। वह कहता है:

जिस श्रद्धेय ऋषि के विषय में आपने प्रश्न किया है और जो आपकी इच्छा है वह मुझे ज्ञात है। वह है पुराणों का सार अति विख्यात ब्रह्म वैवर्त पुराण जो समस्त पुराणों, उप–पुराणों और वेदों की त्रुटियों का परिष्कार करता है।

ब्राह्मणों की वह दूसरी पहेली है जिसके अनुसार उन्होंने अपने पवित्र ग्रंथों को प्राथमिकता, प्रमुखता और प्रामाणिकता दी।

वेदों के पतन की कथा यही समाप्त नहीं होती। पुराणों के बाद साहित्य का एक अन्य रूप उभरकर आया–'तंत्र'। इनकी संख्या भी काफी दुर्जेय है। शंकराचार्य ने 64 तंत्र गिनाए हैं। इनके अतिरिक्त भी बहुत से होंगे।

इस साहित्य का रचयिता दत्तात्रेय को बताया गया है जो हिन्दू त्रिमूर्ति के अवतार कहे जाते हैं। अर्थात ब्रह्मा, विष्णु और शिव। उन्हें इस प्रकार तीन सर्वोच्च देवों के समान ज्ञान का संगम कहा गया है। किन्तु वे मात्र शिव पर निर्भर हैं जिन्होंने अपनी भार्या दुर्गा अथवा काली को वे रहस्यात्मक सिद्धांत और अनुभव बताए जो उनके भक्तों को ज्ञात होने चाहिए, और जिनका उन्हें अनुशीलन करना चाहिए। कहा गया है कि वह प्रामाणिक अथवा उच्च परम्परा उनके केन्द्रीय अर्थात पंचम मुख से प्रकट हुई। क्योंकि यह परम पावन और गुह्य ज्ञान है, इसलिए यह अदीक्षितों के समक्ष प्रकट नहीं होना चाहिए। इन्हें अगम कहा गया है। इस प्रकार वे वेदों के ज्ञान निगम धर्मशास्त्रों और अन्य ग्रंथों से भिन्न हैं।

तंत्र विशेष रूप से शाक्तों और उनके विभिन्न संप्रदायों के धार्मिक ग्रंथ हैं। तांत्रिकों की कई शाखाएं हैं जो अपनी भिन्न–भिन्न परम्पराओं को मानते हैं और उनके अंतरंग अनुयाइयों के अतिरिक्त अन्य की समझ के बाहर हैं। तांत्रिकों और दक्षिणाचारियों के कर्मकांड शुद्ध और वेदानुकुल बताए गए हैं, जबकि वामांचारियों को केवल शूद्रों के लिए बताया गया है।

तंत्रों के उपदेश पुराणों की तरह भक्तिमार्ग पर आधारित और उपनिषदों एवं ब्राह्मणों के कर्ममार्ग तथा ज्ञानमार्ग से श्रेष्ठ कहे जाते हैं। इनमें एक देव की आराधना का निर्देश दिया गया है। विशेष रूप से शिव–भार्या का, जो जगतजननी कही गई है। इन सभी रचनाओं में नारी गुणों को साकार मानकर प्रमुखता दी गई। पुरूषों की प्रायः उपेक्षा की गई है।

वेदों और तंत्रों में क्या संबंध है? मनुस्मृति के विख्यात भाष्यकार कुल्लूक भट्ट को यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि श्रुति के दो अंग हैं, वेद और तंत्र। इसका अर्थ हुआ वेद और तंत्र का समान स्तर है। कुल्लूक भट्ट की तरह वैदिक ब्राह्मणों ने वेदों और तंत्रों को समान माना है बल्कि तंत्र लेखक तो चार कदम आगे हैं। उनका दावा है कि वेद शास्त्र और पुराण एक सामान्य नारी के समान है, जबकि तंत्र एक कुलीन नारी की भांति है। इसका आशय यही है कि तंत्र वेदों से श्रेष्ठ हैं।

इस सर्वेक्षण से एक तथ्य स्पष्ट है कि ब्राह्मणों को अपने धार्मिक साहित्य में कभी अटल विश्वास नहीं रहा। उन्होंने यह बताने के लिए संघर्ष किय कि वेद केवल पवित्र ग्रंथ ही नहीं बल्कि संशय–रहित हैं। यही नहीं कि उन्होंने कहा है कि वेद संशय–रहित हैं अपितु उन्होंने इस संबंध में मनगढंत सिद्धांत और तर्क प्रस्तुत किए। इसके बाद वेदों को पहले उन्होंने स्मृतियों से हीन बताया फिर पुराणों से और अन्ततोगत्वा तंत्र से भी निचले गर्त में डाल दिया। यह यक्ष प्रश्न है कि आखिर ब्राह्मणों ने अपने पवित्रतम ग्रंथ वेदों की यह दुर्दशा क्यों बनाई कि वे स्मृतियों, पुराणों और तंत्र तक से तुच्छ हो गए।

सभार – बाबा साहब डा० अम्बेडकर
संपूर्ण वाङ्मय खंड–8
पृष्ठ सं.–63–70

सुबह का नाश्ते पर दे ध्यान

सुबह का नाश्ता हमारे अच्छे स्वास्थ्य के लिए बहुत आवश्यक है। रात में भोजन करने के बाद अगले दिन सुबह तक हम करीब 9–10 घन्टे बिना कुछ खाए रहते है, जिससे हमारे शरीर को सुबह के समय पौष्टिक भोजन की बहुत जरूरत होती है। अक्सर देखने में आता है कि अधिकतर बड़े तथा स्कूल जाने वाले बच्चे सुबह नाश्ता या तो बिल्कुल ही नहीं है और अगर करते भी है तो सुबह जल्दी में होने के कारण कुछ थोड़ा–बहुत खा लेते हैं। कम नाश्ते का या बिल्कुल नाश्ता न खाने का क्या प्रभाव होता है इस बात की जानकारी के लिए जो भी अनुसंधान अभी तक हुए हैं उनसे यही पता चलता है।

स्कूल में पढ़ने वाले विद्यार्थी या अन्य दिमागी काम करने वालों की कार्यक्षमता कम हो जाती है। काम करने की क्षमता दोपहर तक बहुत कम होती है। अगर नाश्ता किया है, लेकिन व पौष्टिक नहीं है तो भी काम करने की क्षमता कम हो जाती है।

नाश्ता न खाने से वजन कम करने में बिल्कुल भी सहायता नहीं मिलती है, बल्कि ऐसा करने से दोपहर को बहुत अधिक भूख लगती है, जिसकी वजह से उस समय जरूरत से अधिक खाना खाया जाता है, जिससे वजन और बढ़ता है।

सुबह का नाश्ता इतना पौष्टिक होना चाहिए जिससे दिन भर के भोजन के कम से कम एक तिहाई पौष्टिक तत्व मिल जाएं। सुबह के नाश्ते में प्रोटीन वाले भोजन की मात्रा अधिक हो तो दोपहर तक थकान नहीं होती और न ही सुस्ती महसूस होती है।

सुबह के नाश्ते में दूध एक पीये या किसी और रूप में जैसी दही की लस्सी लेना चाहिए। इसके साथ ही चपाती, ब्रेड, दलिया, कॉर्नफ्लेक्स, इडली, डोसा में से कुछ भी ले सकते हैं। साथ में अण्डा, पनीर या अंकुरित दालें भी लें। इससे प्रोटीन की मात्रा नाश्ते में बढ़ जाती है। अंकुरित दालें कच्ची या उबली हुई (आधी कटोरी या 2 बड़े चम्मच) बहुत पौष्टिक होती है।

लेकिन अगर उबली हुई अंकुरित दालें लेना पसन्द करें तो इस बात का ध्यान रखें कि बहुत अधिक पानी में यह ना उबालें और उबालने के लिए प्रेशर कुकर का ही इस्तेमाल करें। कोई फल मौसम के अनुसार ले सकते हैं।

केला, सन्तरा, पपीता, मौसमी आदि। अन्त में चाय या कॉफी भी ली जा सकती है। इस बात का विशेष ध्यान रखें कि तला हुआ खाना न लें, इसे बहुत सुस्ती आती है और वजन भी बढ़ने का डर रहता है। स्कूल जाने वाले बच्चों के नाश्ते की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए क्योंकि उन्हें पढ़ाई करनी होती है। स्कूल जाने से पहले एक कप दूध के साथ अण्डा या थोड़ी सी अंकुरित दालें खाकर स्कूल जाएं तो उन्हें पढ़ते समय सुस्ती नहीं आयेगी।

स्कूल के लिए दिए जाने वाले टिफिन में पराठा, ब्रेड, मक्खन के साथ जैम या पनीर लगाकर दिया जा सकता है। साथ में थोड़े भुनी मूंगफली के दाने या बिल्कुट भी दें।

अगर संभव हो तो एक फल, केला, संतरा, अमरूद, सेब भी दे दें। महिलाएं घर का काम पूरा करने से सुबह के समय इतनी व्यस्त रहती है कि वे अपने खाने की और बिल्कुल ध्यान नहीं देती हैं। उन्हें यह समझना जरूरी है कि उनके लिए भी पौष्टिक नाश्ता इत्मीनान से लेने के बाद आप स्वयं महसूस करेंगे कि आपकी क्षमता बराबर बनी रहेगी और आपको थकान भी महसूस नहीं काम करने होगी।

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

सफलता के सूत्र

एक वचन खुद से लें, बुलंदी पर पहुंचने का। एक आत्मविश्वास खुद में जगाएं, मनचाहा हासिल करने का। नई सोच, नई उमंग के साथ आगे बढ़ने का। आप देखेंगे कि हवा भी आप के साथ है। फिर भला किसकी ताकत है आप को रोकने की।

यह बात बड़े तो बड़े, छोटे बच्चों पर भी लागू होती है। बच्चा भी अगर कोई अच्छा काम करता है तो उसका हौसला बढ़ाइए। इससे उसमें बचपन से ही आत्मविश्वास पनपेगा। कोई मुश्किल पड़ने पर वह डरने के बजाय खुद अपनी हिम्मत से राह ढूंढ़ लेगा। इसके लिए जरूरी, अपने पर भरोसा करना सीखें। कुछ नियमों पर अमल करें, फिर देखिए, सफलता हर क्षेत्र में आप की साथी होगी।

लक्ष्य बनाएं

हर कोई सफलता चाहता है। आसमान छूने की तमन्ना सभी में होती है। चाहे वह कैरियर का क्षेत्र हो या पढ़ाई का, इसके लिए लक्ष्य बनाकर उस पर ध्यान दें। अपनी काबिलीयत को पहचानें और उसीके मुताबिक काम करें। हरदम चौकन्ने रहने से आपको पता लगता रहेगा कि आप कहां गलत साबित हो रहे हैं।

चुनौती स्वीकारें

'मुझसे नहीं हो सकता', ऐसा हरगिज अपने दिमाग में न लाएं, फैसला कर लें कि मैं यह काम करके ही दम लूंगा। जोखिम के काम शुरू में आप का हौसला पस्त कर सकते हैं, पर चुनौतियों को मंजिल मानकर काम करने से आप में आत्मविश्वास पैदा होगा। ऐसा करने से आप में आत्मविश्वास पैदा होगा। ऐसा करने से आप अपने में बदलाव महसूस करेंगे। स्वामी विवेकानंद ने एक जगह लिखा है, ''चाहे कोई कितना ही बड़ा क्यों न हो, उसके पीछे आंख मूंद कर मत चलो। सबकी बात को अपनी बुद्धि से तोलो, तब आगे बढ़ो।''

इंगलिश स्पीकिंग जरूरी

आज अंग्रेजी ने कैरियर के क्षेत्र में अपनी खास जगह बना ली है। ऐसे में जो लोग अंग्रेजी से दूर रहना चाहते हैं, उन्हे नुकसान उठाना पड़ेगा और जो अंग्रेजी में एक्सपर्ट हैं, उन्हें लाभ मिलेगा। दरअसल, अंग्रेजी ग्लोबलाइजेशन की बेसिक जरूरत है।

तमाम ऐसे क्षेत्र हैं, जहां पर इस समय सिर्फ इंगलिश स्पीकिंग लोगों की ही जरूरत है। इनमें प्रमुख रूप से काल सेंटर सौफ्टवेयर, टेली मार्केटिंग, नेट मार्केटिंग को शामिल किया जा सकता है। इसके अलावा भी कुछ क्षेत्र ऐसे हैं। जहां पर अंग्रेजी के जानकारों को ही जौब मिला है या फिर प्रमुखता दी जाती है। यही वजह है कि आजकल ज्यादातर अभिभावक अपने बच्चों को पब्लिक स्कूलों में पढ़ाना पंसद करते हैं। दरअसल, पब्लिक व कान्वेंट स्कूलों में अंग्रेजी का जो माहौल मिलता है, वह प्रादेशिक बोर्ड के स्कूलों में नहीं मिलता। अभिभावक इस सच्चाई को बखूबी समझने लगे हैं कि बेहतर कैरियर के लिए इंगलिश इज मस्ट। इसीलिए उन्होंने इंगलिश को कैरियर की फ्यूचर प्लानिंग में शामिल कर लिया है।

अनुशासित रहें

किसी भी नए काम को शुरू करने से पहले उसकी पूरी जानकारी लें। अपने काम के प्रति पूरी ईमानदारी रखें। दूसरों पर अपना काम टालें नहीं। परजीवी कभी सफल नहीं होता, क्योंकि उसके पास किसी भी काम का अनुभव नहीं हो पाता। अगर किसी काम में असफलता हाथ लगती है तो अपने किसी दूसरे फन का इस्तेमाल करना सीखें। कहते भी हैं कि एक रास्ता बंद होता है तो दस खुलते हैं। वैसे भी जीतता वही है, जिसे जीतने का विश्वास होता है।

ग्रुप डिस्कशन

ग्रुप डिस्कशन में सफल होने के लिए आपको अपनी विशिष्ट पहचान बनाने के लिए तत्पर रहना होगा। आप की आवाज कम से कम इतनी ऊंची हो कि ग्रुप के अन्य सदस्यों और मूल्यांकनकर्ताओं को आसानी से सुनाई दे। अपनी बात को दृढ़ता से रखें। दृढ़ता का मतलब आक्रामकता या अक्खड़पन नहीं है। विनम्रतापूर्वक भी अपनी बात दृढ़ता से कही जा सकती है। अपने कथन को बार बार बदलें नहीं। अगर आप सोच समझकर बोलते हैं तो आप के लिए अपने कथन पर टिके रहना आसान होगा।

ग्रुप डिस्कशन खत्म होने के बाद कई लोगों की शिकायत रहती है कि उन्हें बोलने का मौका नहीं मिला। आपको इस इंतजार में रहने की जरूरत नहीं है कि कोई आपको बोलने को कहेगा। आपको इस मौके की तलाश खुद करनी होगी और शुरू के क्षणों में ही आगे आना होगा। अगर 10 लोगों के बीच आधे घंटे के ग्रुप डिस्कशन में आप सिर्फ 2–3 वाक्य बोलकर चले आते हैं तो यह पर्याप्त नहीं है।

आप कितनी देर तक बोलते हैं, इससे ज्यादा महत्वपूर्ण यह है कि आप की बातों में कितना वजन है।

इसी प्रकार आप भी सजग रहें कि आपकी पूरी बात सुनी जाए। अगर कोई बीच में बोलने लगता है तो उससे कहें कि कृपया आप को अपनी बात पूरी कर लेने दें।

ग्रुप डिस्कशन के समय आपको अन्य सदस्यों के साथ मित्रवत पेश आना चाहिए, प्रतिद्वंद्वी के रूप में नहीं।

अगर आप समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं में सामाजिक विषयों की जानकारी का नियमित रूप से अध्ययन करते हैं तो इससे आप को ग्रुप डिस्कशन की अपनी तैयारी में मदद मिलेगी।

ग्रुप डिस्कशन में आप किसी क्षणिक प्रभाव से अपनी सफलता नहीं सुनिश्चित कर सकते। इसके लिए आपको डिस्कशन शुरू होने से लेकर खत्म होने तक पूरी तरह से सजग रहना होगा।

खुद से प्यार करें

एक समय था जब गोरा रंगरूप, काले लंबे बाल, बड़ी–बड़ी आंखें सुंदरता के लिए जरूरी हुआ करते थे, पर अब फिटनेस व स्मार्टनेस का जमाना है। आप सुंदर हों, यह अब जरूरी नहीं, अब आप के हाथ में है कि आप कैसे लगना चाहते हैं। इसलिए अपने से प्यार करें। अपने रखरखाव का पूरा ध्यान रखें। फैशन के हिसाब से रहें, पर इसका मतलब यह भी नहीं है कि जो आप पर फबे नहीं, वह भी पहनें, पहनावा वही हो, जो नई पहचान दे।

सेवा में,

नाम श्री.....

पता .....

.....

.....

स्वस्थ रहिए

'जान है तो जहान है' अगर आप का शरीर स्वस्थ है तो आप संसार के सबसे सुखी प्राणी हैं। बाकी जीवन में सुख दुख तो आते रहते हैं, लेकिन सच्चाई जानते हुए भी बहुत कम लोग ही अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखते हैं। कुछ लोग स्वाद को स्वास्थ्य से ज्यादा महत्व देते हैं, जबकि पहली शर्त यही होनी चाहिए कि हम स्वस्थ रहें। स्वस्थ रहने से हम आत्मविश्वास से लबरेज रहते हैं। इसलिए रोज कुछ समय व्यायाम व पैदल घूमने में भी लगाना चाहिए।

सकारात्मक सोचें

परफेक्ट कोई नहीं होता। इसलिए अपनी कमियों को ढूंढ़ें। 'मैं यह काम अवश्य कर सकता/सकती हूं, हमेशा ऐसी धारणा बनाए रखें। बस, हौसला रखकर पूरे मन से अपना काम करें, परिणाम बेहतर ही आएंगे।

कैरियर और ईगो

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, ईगो के कुछ फायदे भी हैं और नुकसान भी। नुकसान भी खासतौर पर कैरियर में अगर ईगो को प्रेफरेंस दें तो न ही हम तरक्की कर सकते हैं ओर न ही अपनी स्किल्स को बेहतर बना सकते हैं।

हम खुद इसका पता लगा सकते हैं कि कब हमारा ईगो हमारे कैरियर में आड़े आता है, कब नहीं। गलतियां सब से होती हैं, लेकिन हमारा ईगो अपनी गलतियों को नहीं मानता और उन्हें सुधारने की कोशिश नहीं करता। इस प्रकार की सोच हमारी सफलता में बाधक बनती है। ऐसे ही खुद को आंकिए। सोचिए कि आप युवा हैं और कैरियर बनाने के बारे में सोच रहे हैं। आप ने एक क्षेत्र चुन लिया है। पढ़ाई के दौरान आप अच्छे छात्र साबित हो चुके हैं। अब आप को आगे बढ़ना है।

मंजिल पर टिकना सीखें

यह है सबसे अहम बात। मंजिल सामने पाते ही खुशी के मारे यह न भूलें कि अभी भी उतनी ही मेहनत व लगन की जरूरत है। एक निश्चित पद पर आने के बाद गंभीरता से फैसले लेना भी एक कला है। आपके साथ आपके ऊपर व नीचे कई लोग हैं। सबसे अपना तालमेल बनाए रखना भी जरूरी है। इसे भी ध्यान में रखना चाहिए। कहा भी गया है कि– 'जब तलक हौसला नहीं होगा, एक भी फैसला नहीं होगा।'

साभार :
क्या कैरियर चुनना चाहोगे?
पृ.सं. 23 से 23 तक।
राकेशनाथ

धर्म की आवश्यकता केवल गरीबों को होती है।

लोग मुझसे प्रश्न करते हैं कि बौद्ध–धर्म ग्रहण करने में मैंने इतनी देर क्यों की? प्रश्न महत्वपूर्ण है। इस संबंध में मैं केवल यहीं निवेदन कर सकता हूँ कि इस धर्म के गंभीर तत्व दूसरों को समझाने की तैयारी करने में मुझे देर लग गई। आज मुझ पर जितनी जिम्मेदारी है, उतनी शायद संसार में किसी पर नहीं है। यदि मैं ज्यादा साल जीवित रहा, तो सब काम पूरा करके दिखाऊँगा। (बाबा साहेब जिंदाबाद की ध्वनि)

अमीरों को धर्म की जरूरत नहीं। जो कोठियों और बढ़िया बंगलों में रहते हैं, जिनके पास धन है, नौकर–चाकर हैं, आराम और मनोरंजन की सारी चीजें हैं, उन्हें धर्माधर्म पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं। दुखी, अभाव–ग्रसित और पीड़ित लोगों को ही धर्म की विशेष आवश्यकता होती है, क्योंकि व आशा पर जीवित रहता है और धर्म उसे आशावादी बनाता है। धर्म उसे धीरज देता है कि 'घबराओ नहीं तुम्हारा मंगल होगा।'' योरप में जिस समय ईसाई धर्म का प्रचार हुआ लोगों को पेट भर खाना नहीं मिलता था। पीड़ित, वंचित और शोषित लोग ही मसीह की शरण में गये। 'गिबन' ने एक बार कहा भी था–''ईसाई धर्म भिखमंगों का धर्म।'' लेकिन वही ईसाई धर्म सारे योरप का धर्म बनकर सारे संसार पर छा गया 'गिबन' यदि आज जीवित होते, तो अपनी बात का जवाब खुद पा लेते।

कुछ लोग कहेंगे बौद्ध–धर्म भंगी–चमार का धर्म है। इससे आपको खिन्न न होना चाहिए। बामण भगवान् को भी ''भो गौतम!'' कहकर चिढ़ाया करते थे और भगवान् कभी–कभी उन्हें ''भो वादी'' कह देते थे। आप जानते हैं कि विदेशों में बामणों के राम, कृष्ण और शिव की मूर्तियों को यदि खरीदने के लिए रखा जाय, तो कोई नहीं खरीदेगा और बुद्ध की मूर्ति रखी जाय, तो एक भी नहीं बचेगी। भगवान का धर्म विश्वव्यापी है, और भारत में भी वह पुनः फैलकर रहेगा। बामण का धर्म मिट रहा है। और मिटकर रहेगा। वह निर्जीव है भगवान बुद्ध का धर्म अजर–अमर है। वह आशा का प्रतीक एवं अभ्युदय और निःश्रेयस का महान मार्ग है। हमें दुख है कि इस धर्म को हमने पहले क्यों नहीं अपनाया।

साभार :
नागपुर का भाषण
पृ.सं. 11 से 12 तक।
अनुवादक चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।